thearyasamaj.org

ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 17 अगस्त 2014 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 17 अगस्त 2014 से 23 अगस्त 2014

आ.शु. अष्टमी ● वि० सं०–2071 ● वर्ष 79, अंक 121, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 191 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,115 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. मॉडल स्कूल, सैक्टर-15ए, चण्डीगढ़ में गायत्री महायज्ञ

डी.ए.वी. मॉडल स्कूल, सैक्टर–15ए, चण्डीगढ़ में ''गायत्री महायज्ञ'' प्राचार्या डॉ. श्रीमती राकेश सचदेवा जी यजमान पद पर सुशोभित हुई तथा विद्यालय के धर्माचार्य, आचार्य रमेश शास्त्री व अन्य धर्माचार्य, आचार्य दाऊदयाल शर्मा, आचार्य दिनेश्वर शास्त्री तथा रामप्रसाद शास्त्री जी के कुशल नेतृतव में बहुत ही सुन्दर तरीके से गायत्री महायज्ञ सुसम्पन्न हुआ। पं. उपेन्द्र जी–भजनोपदेशक महायज्ञ के बीच–बीच में संगीत के माध्यम से सभी को मंत्रमुग्ध करते रहे। विद्यालय के सभी छात्र–छात्रायें बड़े उत्साह व श्रद्धा के साथ इस महायज्ञ में सम्मिलित हुए व

आहुतियाँ प्रदान की तथा आवश्यक यज्ञ–सामग्री व धनराशि का भी दान देकर पुण्य के भागी बने।

माननीय श्री हंसराज गंधार, सलाहकार–अध्यक्ष, डी.ए.वी. कॉलेज प्रबन्धकर्त्री समिति, नई दिल्ली भी इस पवित्र यज्ञ में पधारे व सभी याज्ञिकजन तथा छात्र–छात्राओं को इस आध्यात्मिक दिशा में आगे बढ़ने के लिए आह्वान किया। महायज्ञ में चण्डीगढ़, पंचकूला, सूरजपुर, डेराबस्सी व मुहाली के सभी डी.ए.वी. शिक्षण संस्थानों के प्राचार्यगण व आर्य समाज के प्रधान मंत्री एवं सदस्यगण भी सम्मिलित हुए। सभी आर्यजनों ने इस महायज्ञ की भूरि–भूरि प्रशंसा की। श्री रवीन्द्र तलवाड़ अध्यक्ष–केन्द्रीय आर्य सभा चण्डीगढ़, पंचकूला एवं मुहाली तथा समादरणीया श्रीमती स्नेह महाजन, सेवानिवृत्त प्राचार्या–एम.सी.एम कॉलेज, सैक्टर–36, चण्डीगढ़ ने भी इस महायज्ञ में पधारकर कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई।

अन्त में शान्ति पाठ व प्रसाद वितरण से आयोजन सम्पन्न हुआ तत्पश्चात् प्रीतिभोज का भी सभी ने स्वाद लिया।

महिला पुरोहित के सानिध्य में दी सस्वर वेदमंत्रों से आहुतियां

आर्य समाज विज्ञाननगर में आर्य महिलाओं ने पूर्णिमा वैदिक सत्संग के प्रारंभ में देव यज्ञ किया गया। श्रीमति शकुन्तला आर्या, मुख्य यजमान, श्रीमती दीपा दुबे व श्रीमती दीपा रस्तोगी यजमान तथा यज्ञ श्रीमति इन्दिरा पाण्डेय के पौरोहित्य में आयोजित हुआ।

श्रीमती उमा वसिष्ठ ने प्रभुभक्ति का भजन सुनाया। आर्य विद्वान अग्निमित्र शास्त्री ने कहा कि संस्कारवान् समाज के निर्माण की जिम्मेदारी क्यों न महिलाओं को दी जाय। प्राचीनकाल में वैदिक ज्ञान से ओतप्रोत विदुषी महिलाओं ने समाज को दिशा प्रदान की है और राष्ट्र निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

आर्य समाज के जिला प्रधान अर्जुनदेव चढ़डा ने कहा कि आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने समाज में महिलाओं को समान अधिकार दिलाने का सर्वप्रथम उद्घोष किया। उन्होंने कहा कि आज यहां आर्य महिलाओं ने पूर्णिमा वैदिक सत्संग की पूरी जिम्मेदारी निभाते हुए कार्यक्रम आयोजित किया है।

कार्यक्रम के अंत में आर्य समाज विज्ञाननगर की उपप्रधाना

श्रीमती अनिता शर्मा ने सभी अतिथियों का आभार व्यक्त किया। शांतिपाठ व प्रसाद वितरण के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

डी.ए.वी हजारीबाग में 65 वाँ वन महोत्सव सम्पन्न

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल हजारीबाग परिसर में 65 वॉ वन महोत्सव का आयोजन किया गया। कार्यक्रम का उद्घाटन मुख्य अतिथि, बिनोबा भावे विश्वविद्यालय के कुलपति, डॉ. गुरमीत सिंह ने पौधारोपण कर किया। बतौर विशिष्ट अतिथि पूर्व आई.जी. श्री दीपक वर्मा ने भी पौधारोपण किया।

कार्यक्रम को संबोधित करते हुए मुख्य अतिथि ने कहा कि वन–महोत्सव हमारे संस्कारों से जुड़ा है। हम आरंभ से ही पीपल, आम, नीम, आंवला, तुलसी, वटवृक्ष जैसे पेड़ों की पूजा करते रहे हैं। पेड़–पौधे हमारे जीवन को प्राणवायु ऑक्सीजन तो देते ही हैं, फल और औषधियाँ भी देते हैं। उन्होंने छात्र–छात्राओं को जागरुक करते हुए कहा कि जैव विविधता के लिए धरती पर एक तिहाई जंगल जरुरी है। आर.सी.सी.एफ. डॉ. प्रदीप कुमार ने कहा कि हम पर्यावरण की चुनौतियों से जूझ रहे हैं। वन विभाग बिना सहयोग के न तो प्रकृति को हरा–भरा रख सकता है और न ही प्रकृति की रक्षा कर सकता है। वन हमारी धरोहर हैं, हमें हर हाल में अपनी धरोहर की रक्षा करनी चाहिए। कार्यक्रम के दौरान स्कूल के बच्चों ने रंगारंग कार्यक्रम व नाटक प्रस्तुत कर लोगों को कार्यक्रम के प्रति जागरुक किया। बच्चों ने *''देश जगाओ प्रकृति बचाओ''* नाटक में गंगा प्रदूषण की समस्या को जीवंत किया।

इस अवसर पर विद्यालय के बच्चों के बीच पेंटिंग, स्लोगन, भाषण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। विद्यालय के प्राचार्य अशोक कुमार ने वन विभाग के अधिकारियों के प्रति आभार प्रकट किया एवं अतिथियों को स्मृति चिह्न देकर उनका स्वागत किया।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – श्री पूनम सूरी

hearyasamaj.org

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 17 अगस्त, 2014 से 23 अगस्त, 2014

तुम मरुस्थल में प्याऊ हो

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

प्र ते यक्षि प्र त इयर्मि मन्म, भुवो यथा वन्द्यो नो हवेषु।
धन्वन्निव प्रपा असि त्वमग्ने, इयक्षसे पूरवे प्रत्न राजन्।।

ऋग् १०.४.

ऋषिः **त्रितः। देवता अग्निः।** छन्दः **त्रिष्टुप्।**

● (**अग्ने**) हे परमेश्वर!, (**ते**) तेरे लिए, (**प्र यक्षि**) [मैं] प्रकृष्टतया आत्म–दान करता हूँ, (**ते**) तेरे लिए, (**मन्म**) स्तोत्र को, (**प्र इयर्मि**) प्रेरित करता हूँ, (**यथा**) जिससे, (**वन्द्यः**) वन्दनीय [तू], (**नः**) हमारे, (**हवेषु**) आह्वानों में, (**भुवः**) संनिहित हो जाए।, (**प्रत्न राजन्**) हे सनातन राजन्!, (**त्वं**) तू, (**इयक्षवे**) यज्ञ के इच्छुक, (**पूरवे**) मनुष्य के लिए, (**धन्वन्**) मरुस्थल में, (**प्रपा इव**) प्याऊ के समान, (**असि**) होता है।

●हे मेरे अग्नि प्रभु! तुम राजा हो और मैं रंक हूँ। इस पद पर तुम आज नये–नये अभिषिक्त नहीं हुए हो किन्तु सनातन राजा हो। मैं तुम्हें क्या उपहार दूँ ! मुझ अकिंचन के पास यदि कुछ है भी तो वह तुम्हारा ही दिया हुआ है। तुम्हारी ही वस्तु तुम्हें कैसे दूँ ! अतः मैं तो तुम्हें अपने आत्मा का ही दान कर रहा हूँ। इस आत्मार्पण के अवसर पर मुहुर्मुहुः तुम्हारे प्रति वैदिक स्तोत्रों का गान कर रहा हूँ, तुम्हारे आगमन की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। तुम उपस्थित होकर मेरे स्वागत को ग्रहण करो, मेरे अभिनन्दन को स्वीकार करो।

हे वन्दनीय अग्निदेव! मै 'इयक्षु' हूँ, मेरे मन में यज्ञ करने की उत्कट लालसा उमड़ रही है। संसार में ज्यों–ज्यों आधि–व्याधियाँ, दुःख, दारिद्र्य बढ़ रहे हैं, त्यों–त्यों यज्ञ की भी आवश्यकता बढ़ती जा रही है। अतः मैंने यज्ञ करने का संकल्प किया है। मैं बाढ़, दुर्भिक्ष, भूकम्प, भुखमरी, महामारी से कराह रहे जन–समाज की सेवा का व्रत लेता हूँ। मैं व्यापक संगठन करूँगा, स्वयं–सेवक–संघ बनाऊँगा। सहायता–शिविर खोलूँगा। हमारे स्वयं–सेवक आतुरों की मरहम–पट्टी करेंगे, अन्न–हीनों को भोजन देंगे, गृह–हीनों को निवास देंगे, कर्म–हीनों को कार्य देंगे। क्या तुम पूछते हो कि सब यज्ञों के लिए धन कहाँ से आयेगा? सुनो, संकल्प की दृढ़ता के आगे धनाभाव कभी बाधक नहीं होता। धन स्वयं बरसेगा। प्रभु यज्ञेच्छु के लिए मरुस्थल में प्याऊ के समान हो जाते हैं। वे स्वयं प्यासे को पानी पहुँचाने की, भूखे को भोजन पहुँचाने की, रोगार्त को औषध पहुँचाने की व्यवस्था करते हैं। मुझ 'पुरु' की, पालन–पूरण करनेवाले की भिक्षा–झोली भी वे स्वयं ही भरेंगे। और मै उनका दूत बनकर भिक्षा बाँटने के लिए द्वार–द्वार पर पहुँचूंगा। मेरा यज्ञ सफल होकर रहेगा

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

दो रास्ते

● महात्मा आनन्द स्वामी

स्वामी सर्वदानंदजी का हवाला देते हुए फूलों से निकाले हुए अर्क को गंदी नाली में फेंक देने का प्रसंग सुनाकर महात्मा आनंदस्वामी ने कहा गृहस्थ आश्रम केवल इसलिए शुरू किया गया ताकि दुनिया चलती रहे। संतान होने के बाद वीर्य रूपी अनमोल रत्न को संभालकर रखने की बात कही और बताया कि इससे स्वास्थ्य ठीक रहेगा, मस्तिष्क अच्छा रहेगा, चित्त में खुशी आएगी, और शरीर में शक्ति बनी रहेगी। समय पर खाना, समय पर सोना, समय पर जागना, उचित काम करना, और उचित व्यायाम करना–इन बातों की ओर स्वामीजी ने पाठकों का ध्यान आकर्षित किया और अपनी बात को पुष्ट करते–करते खाने में परहेज़ न करने वाले अपने किसी मित्र की कहानी भी सुनाई।

मनुष्य को व्यायाम करना चाहिए यह बताया, इसका तरीका बताया, और श्रीनगर में अपने साथ हुई एक घटना भी सुनाई और कहा कि खुल कर खूब जोर से हँसना ऐसा व्यायाम है जिससे शरीर की सभी नस–नाड़ियाँ खुल जाती है। व्यायाम न करने और इधर–उधर की चीजें खाने के अभिशाप भी बताए और स्पस्थ रहने का संकेत करते हुए कहा.... 'Longer the waiste line, Shorter the life line' । अपनी बात समाप्त करते हुए 'गीता' के शब्दों में कहा, अपने सोने का, अपने जागने का, खाने का , काम करने का, समय निश्चित करें और उस समय से इधर–उधर मत जाएं। यही उचित आहार और व्यवहार का अर्थ है।

अब आगे...

चौथा दिन

[पूज्य श्री आनन्द स्वामी जी महाराज ने 'दो रास्ते' की कथा को चौथे दिन आरम्भ करने से पहले लम्बे–ऊँचे स्वर में एक ही बार लगभग साठ सैकण्ड तक 'ओ३म्' का उच्चारण करने के बाद कहा–]

1. मेरी प्यारी माताओ और सज्जनो!

सामवेद के 61 वें मन्त्र की बात आपको सुना रहा था–

सोमं राजानं वरुणमग्निमनु आरभामहे।
आदित्य विष्णुं सूर्य ब्रह्माणं च बृहस्पतिम्।।

यह वेद की भाषा है बहुत सीधी और सरल, परन्तु ऐसी भी कि इसके सम्बन्ध में कुछ सोचना पड़ता है। इस मन्त्र में कई नाम हैं। 'क्रिया' केवल एक है–

"अनु आरभामहे।"

'इसके अनुसार चलकर अपने जीवन को आरम्भ करता हूँ।' परन्तु किसके अनुसार चलकर? इस मन्त्र में वे सब नाम आ गए हैं जिसके अनुसार चलना है। कौन हैं वे?

सोमम् राजानम्, वरूणम्, अग्निम्, आदित्यम्,

विष्णुम्, सूर्य्यम्, ब्रह्माणम्, बृहस्पतिम्।

ये सब–के–सब। इसलिए मन्त्र के अर्थ को आसानी से समझना हो तो कहना चाहिए–

सोमम् अनु आरभामहे, राजानम् अनु आरभामहे।

वरुणम् अनु आरभामहे, अग्निम् अनु आरभामहे।

आदित्यम् अनु आरभामहे, विष्णुम् अनु आरभामहे।

सूर्य्यम् अनु आरभामहे, ब्रह्माणम् अनु आरभामहे।

बृहस्पतिम् अनु आरभामहे।

सोम के अनुसार, राजा के अनुसार, वरूण के अनुसार, अग्नि के अनुसार, आदित्य के अनुसार, सूर्य्य के अनुसार, ब्रह्मा के अनुसार और बृहस्पति के अनुसार मैं अपने जीवन को चलाता हूँ। परन्तु क्यों चलाता हूँ? इसलिए कि 'श्रेय मार्ग' पर चल सकूं। इस मन्त्र की बात कहते हुए आपको बताया कि 'सोम' का अर्थ क्या है, 'राजा' का अर्थ क्या है। तीसरा शब्द है 'वरूण'। आज इस वरूण की बात कहूँगा।

कल 'राजानम् या 'राजा' की व्याख्या करते हुए मैंने कहा कि अपने आपको नियम के अनुसार, कायदे के अनुसार चलाओ। हर बात का समय निश्चित करो। कब जागना है, कितनी देर व्यायाम करना है, किस समय नहाना है, कितनी देर प्रभु–भजन में बैठना है, किस समय खाना है, क्या खाना है, कितना खाना है, किस समय काम करना है, किस समय बच्चों के साथ खेलना है, किस समय

thearyasamaj.org

सोना है, हर बात के लिए समय निश्चित करो और फिर उनके अनुसार चलते जाओ।

इस प्रकृति को देखो! यह जड़ प्रकृति यदि कानून के अनुसार चल सकती है तो हम क्यों नहीं चल सकते? चने का बीज बोयें तो उससे पैदा होने वाले पौधे के साथ चने ही लगेंगे, अंगूर या बेर नहीं। अंगूर की बेल लगाओ तो समय आने पर उसके साथ अंगूर ही लगेंगे, मटर या मूँगफली नहीं। बिल्कुल साथ–साथ नीम और चीकू के वृक्ष लगाओ तो नीम में कड़वाहट–ही–कड़वाहट होगी, चीकू में मिठास–ही–मिठास। भूमि वही है, पानी वही, एक ही सूर्य का प्रकाश दोनों को मिलता है, एक ही चाँद की चाँदनी मे दोनों नहाते हैं, बादल आएँ तो दोनों पर एक–जैसी वर्षा होती है, परन्तु फल लगते हैं तो अलग–अलग, क्योंकि दोनों के बीज अलग–अलग हैं। प्रकृति का कानून यह है कि जैसा बीज होगा, वैसा ही फल लगेगा। केले के वृक्ष के साथ कपास कभी उगेगी नहीं, कपास के पौधे पर सन्तरे कभी लगेंगे नहीं, यह प्रकृति का नियम है।

और फिर इस जमीन को देखो, चाँद को, सूर्य को, तारों को, सितारों को, सब–के–सब नियमानुसार चल रहे हैं, करोंड़ों शताब्दियों से चल रहे हैं। कभी एक क्षण के लिए भी उनकी चाल में रूकावट नहीं आती, उनकी गति नहीं बदलती, उनका रास्ता नहीं बदलता। थोड़ी देर के लिए थोड़ा–सा रास्ता भी बदल दें या उनमें से कोई एक बदल दे तो महानाश जाग उठेगा। परन्तु वे ऐसा करते नहीं, कभी आपस में झगड़ते नहीं, जो नियम उनके लिए निश्चित कर दिये गए उनमें बँधे हुए निरन्तर चले जाते हैं।

अरे! बेजान प्रकृति यदि नियम के अनुसार चलती है, पशु यदि नियम के अनुसार चलते हैं तो मनुष्य क्यों नहीं चल सकता? चल सकता है जरूर, परन्तु चलता नहीं। सब कानून–कायदे तोड़ने का ठेका इसने ले लिया है। कानून को तोड़ा जाय तो दंड मिलता है जरूर, दण्ड मिले तो कानून तोड़नेवाला रोता है, चिल्लाता है, दु:खी होता है–आज पेट खराब है, कल टाँगे काम नहीं करती, कभी आँखों का रोना है, कभी छाती में दर्द, कभी एक कष्ट, कभी दूसरा।

अरे भाई! पहले ही देखकर चलना चाहिए था। स्वयं अपने शरीर को बिगाड़ लिया। कानून व कायदे के अनुसार चलना चाहिए था, अब रोने से क्या होगा?

हमारे बुजुर्गों (पूर्वजों) ने, योगियों और महात्माओं ने ध्यान की अवस्था में जाकर मनुष्य–शरीर के हर भाग को देखा। एक–एक नाड़ी को देखा, एक–एक नस को। इस बात को समझा कि शरीर को ठीक रखने के लिए क्या करना चाहिए। अन्त में अपने सोच–विचार का निचोड़ उन्होंने प्रस्तुत किया–

ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत।

'ब्रह्मचर्य से मौत को जीता जा सकता है।'

और आजकल इस ब्रह्मचर्य का ही सत्यानाश करने पर कमर बाँध ली गई है। शासन भी गलत रास्ते पर चल रहा है, लोग भी। फैमिली प्लानिंग अच्छी बात है। बच्चे कम पैदा करो ताकि जितने हों उनको सुख से रखा जा सके, उनका पालन हो सके, उन्हें विद्या मिल सके, रोज़गार मिल सके। ऐसा करने का सीधा और लाभकारी ढंग है– 'ब्रह्मचर्य।' जो मनुष्य ब्रह्मचर्य से रहता है उसके अन्दर सहनशक्ति उत्पन्न होती है, उसके स्वभाव में चिड़चिड़ापन नहीं, बल्कि मन में एक स्वाभाविक खुशी, स्वाभाविक हौसला (उत्साह), स्वाभाविक आत्म विश्वास विद्यमान रहता है। 'योगदर्शन कहता है–

ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां वीर्यलाभ–।

'ब्रह्मचारी रहने से मनुष्य में बल अता है।' किस बात का बल? दु:खों, मुसीबतों, कष्टों और क्लेशों को सहन करने का बल, तप का बल, शत्रुता का सामना करने का बल, सच्चाई के रास्ते पर चलने का बल, जीतने का बल। जो ब्रह्मचर्य को नष्ट करते हैं, वे स्वयं भी नष्ट हो जाते हैं।

दिल्ली के अन्तिम हिन्दू शासक महाराज पृथ्वी राज बार–बार मुहम्मद गोरी को हराने के बाद अन्तिम बार उससे हारे तो क्यों? इसलिए कि अन्तिम युद्ध से पहले वह संयोगिता के साथ रंगरलियाँ मनाने में अपनी शक्ति को नष्ट कर बैठे थे। शक्ति थी तो पृथ्वीराज जीता। यह शक्ति नष्ट हुई शताब्दियों के लिए परतन्त्र बनाने का कारण बन गया।

दिल्ली के अन्तिम हिन्दू शासक महाराज पृथ्वी राज बार–बार मुहम्मद गोरी को हराने के बाद अन्तिम बार उससे हारे तो क्यों? इसलिए कि अन्तिम युद्ध से पहले वह संयोगिता के साथ रंगरलियाँ मनाने में अपनी शक्ति को नष्ट कर बैठे थे। शक्ति थी तो पृथ्वीराज जीता। यह शक्ति नष्ट हुई शताब्दियों के लिए परतन्त्र बनाने का कारण बन गया।

केवल पृथ्वीराज क्यों! कितने ही दूसरे बड़े–बड़े योद्धाओं और शासकों का भी यही हाल हुआ। इस दिल्ली में ही मुहम्मदशह रंगीला शासक था तो नादिरशाह ने आक्रमण किया। नादिरशाह मार–काट करता हुआ आगे बढ़ता आया। ईरान से चला, अफगानिस्तान में पहुँचा। अटक तक आ गया। ये सब–के–सब प्रदेश दिल्ली में बैठे हुए रंगीले बादशाह के थे। अटक को पार करके वह पंजाब में दाखिल हुआ, मार–धाड़ करता हुआ दिल्ली की ओर बढ़ता आ गया और दिल्ली का रंगीला बादशाह यह कहकर भोग–विलास में मस्त रहा कि अभी तो दिल्ली बहुत दूर है। जब नादिरशाह दिल्ली के पास पहुँचा तो रंगीले बादशाह इसके सिवाय कुछ कर नहीं सके कि उसके कदमों (पांवों) में सिर झुका दें। नादिरशाह ने थोड़ी–सी धृष्टता देखी तो दिल्ली में कत्ले–आम मचा दिया। हजारों लोग मरे, हजारों घर लूटे गए, दुकानें लूटी गईं, और रंगीले आदशाह इसके सिवाय कुछ नहीं कर सके कि गले में पल्लू डालकर नादिरशाह से दया की भीख माँगें। अपने खजाने (कोष) का बहुत बड़ा भाग उन्होंने नादिरशाह को दे दिया; तख्तताऊसदे दिया; सैकड़ों घोड़े और हाथी दे दिये; क्योंकि रंगीले लोग केवल रंगरलियाँ मना सकते थे; लड़ नहीं सकते थे।

इतनी बहुमूल्य वस्तु है वह रत्न जो आदमी के शरीर में पैदा होता है। इसकी रक्षा का प्रचार करने के बजाय यदि उसे फैमिली प्लानिंग की गोलियों की भेंट कर दिया जाय तो मेरे खयाल में यह सरासर पागलपन है। अपने–आप को काबू (वश) में रखने के लिए कोई कानून कायदा होना चाहिए। और किसी से नहीं तो बेजान प्रकृति से, पशुओं से कानून के अनुसार चलने की बात सीखनी चाहिए।

यह है 'राजा' के अनुसार चलने की बात।

अब इस मन्त्र में आये तीसरे शब्द 'वरूण' को देखिये।

वरूण के कई अर्थ हैं। परमेश्वर का भी एक नाम 'वरूण' है क्योंकि वह 'वरूण' के योग्य है। सब उसको चाहते हैं। 'वरूण' एक महासूर्य या 'आदित्य' का नाम भी है। 'वरूण' पानी को भी कहते हैं और ईश्वर की उस शक्ति को भी जो पानी को पानी बनाए रखती है। 'वरूण' समुद्र को भी कहते हैं, सूर्य के गिर्द घूमते हुए उस तारे को भी जो मंगल, बृहस्पति, शनि और अरूण तारे से परे है और हमारी पृथिवी से दो अरब सत्तर करोड़ चालीस लाख मील के फासले पर है। 'वरूण' आकाश को भी कहते हैं, सूर्य को भी। एक वृक्ष का नाम भी 'वरूण' है, एक ऋषि का नाम भी 'वरूण' था। 'वरूण' उसे भी कहते हैं जो बहुत सुन्दर हो, बहुत रसीला, बहुत श्रेष्ठ।

परन्तु कोई मनुष्य 'श्रेष्ठ' बनता कैसे है? पहली बात यह है कि जो परतन्त्र है वह श्रेष्ठ नहीं हो सकता। आप कहेंगे कि हमारा देश तो स्वतन्त्र हो गया। हम अब किसी के अधीन नहीं। हम तो सब–के–सब 55 करोड़ आदमी श्रेष्ठ हो गए हैं।

ऐसी बात नहीं है मेरे भाई! सच्चाई यह है कि जिसे हमने स्वतन्त्रता समझा, उसके बाद लोगों में ज्यादा खराबियाँ आई हैं, गिरावट आई है, बिगाड़ आया है और इसका सीधा–सा अर्थ यह है कि जिसे हम स्वतन्त्रता समझ बैठे हैं वह वास्तव में स्वतन्त्रता है नहीं। वास्तविक स्वतन्त्रता के लिए हमें अभी और यत्न करना होगा। अभी तो केवल यह हुआ कि गोरे अंग्रेज चले गए हैं, काले अंग्रेज आ गए हैं और हर बात में 'वही है चाल बेढंगी जो पहले थी वो अब भी है।'

हम वस्त्र तो पहनते हैं यूरोपवालों के, भाषा सीखते हैं बर्तानिया की, नकल करते हैं पश्चिम की, जैसे अपना कुछ है ही नहीं। यह स्वतन्त्रता क्या हुई? हमारे दिलों पर, हमारे दिमागों (मस्तिष्क) पर तो आज भी हजारों मील दूर की सभ्यता छाई हुई है। हमारे विचार विदेशी हैं, व्यवहार विदेशी है, रहन–सहन विदेशी है, और हम समझ बैठे कि हम स्वतन्त्र हो गए। याद रखो! विचार की शक्ति बहुत महान् है। इससे दुनिया बन भी सकती है, नष्ट भी हो सकती है। मन में जो विचार उठते हैं वे मनुष्य के लिए स्वर्ग भी पैदा कर सकते हैं और नरक भी

दिल ही की बदौलत रंज भी हैं,
दिल ही की बदौलत राहत भी,
यह दुनिया जिसको कहते हैं,
दोजख भी है और जन्नत भी।

विचार की शक्ति वह शक्ति है जो जाति और राष्ट्रों के भाग्य बदल सकती है। परन्तु हम क्या कर रहे हैं? हमारे स्कूलों–कॉलेजों में आज भी वही किताबें पढ़ाई जाती हैं जो अंग्रेजों के समय में पढ़ाई जाती थीं। नौजवान (युवा) लड़कों और लड़कियों के दिमागों में वही बातें बिठाने का यत्न हो रहा है जो अंग्रेजों के जमाने में बिठाई जाती थीं। वही गलत इतिहास, वही गलत विचार, वही भाषा, वही वेश। इसके बाद भी हम कहें कि हम स्वतन्त्र हो गए हैं इसलिए श्रेष्ठ बन गए तो इससे गलत बात और क्या होगी? असली स्वतन्त्रता तब आएगी जब यह गलत और उलटी विचारधारा बदलेगी।

शेष अगले अंक में....

thearyasamaj.org

कहो वेद 'हाँ' या सहो वेदना

● देव नारायण भारद्वाज,

हाँ या ना, इन दो नन्हें शब्दो का संसार में बड़ा बोल–बाला है। ये जिसके साथ जुड़ जाते हैं, वह या तो सक्रिय हो जाता है या निष्क्रिय, जीवन्त हो जाता है या मृतवन्त। इसलिये इन शब्दों का विवेकपूर्वक प्रयोग वांछित है, अन्यथा घर–समाज में प्रायः हास्यास्पद ही नहीं, त्रासद स्थिति उत्पन्न हो जाती है। बड़े भाई को अपनी धर्मपत्नी को ससुराल से बिदा कराने जाना था। अति व्यस्तता वश उसने अपने छोटे भाई को भाभी को बुला लाने के लिए तैयार किया। छोटा भाई ठहरा मन्द बुँद्धि, उसने जाने में हिचकिचाहट अनुभव की, कहा मैं तो वहाँ बात भी नहीं कर सकता! बड़े भाई ने समझाया अधिक कुछ नहीं बोलना, हाँ–नहीं कहते रहना, रुकना नहीं शीघ्र बुला लाना अपनी भाभी को। ससुराल पहुँचने पर प्रश्नोत्तर का क्रम कुछ इस प्रकार चालू हुआ। बड़े भाई नहीं आये? हां। वे ठीक तो हैं? ना। बीमार हैं? हां। चलते–फिरते जीवित हैं? ना। क्या तुम्हारी भाभी विधवा हो गयी? हां। यह सुनते ही वहाँ रोना–पीटना प्रारम्भ हो गया। ससुराली जन उस मन्दबुद्धि भाई व उसकी भाभी को अतिशय आकुल–व्याकुल–शोकाकुल दशा में लेकर उसके घर पहुँचे, तो क्या देखते हैं! बड़े भाई जीवित–जागृत–हँसते–मुस्काते हुए इन आगन्तुकों के स्वागत में खड़े हैं। उन्हें बताया गया कि आपके छोटे भाई ने तो हम लोगों को अपनी भाभी के विधवा होने का समाचार सुनाकर रूला दिया। बड़े भाई ने अपने छोटे को डाँटते हुए समझाना चाहा कि मेरे जीवित रहते हुए तुम्हारी भाभी विधवा कैसे हो सकती है! छोटे भाई ने जो उत्तर दिया, उसे सुनकर अभी तक रोने वाले सभी खिलखिलाकर हँस पड़े। वह बोला, तुम्हारे रहते अपनी दादी विधवा हुई कि नहीं। माता विधवा हुई तब भी तुम थे। तब तुम्हारे रहते भाभी विधवा नहीं हो सकती हैं क्या? बात हास्य की है, साथ ही हां–ना के रहस्य की भी।

वेद के साथ जोड़िये– हाँ, तो मिलेगा वेदोपदेश, फिर हमारे जीवन का कल्याण ही कल्याण है। वेद कह उठेगा–उद्यानं ते पुरुष नावयानम् (अथर्ववेद 8.1.6) हे पुरुष! तुम्हारी उन्नति हो–अवनति कदापि नहीं! जाने अनजाने कैसे भी वेद के साथ जुड़ गया ना–तो बन गया शब्द 'वेदना' अर्थात व्यथा, पीड़ा, सन्तापकारी अकल्याण। इसलिये हमें हर क्षण सतर्क होगा कि हमारे जीवन में वेद ही वेद रहे, कहीं छिटककर इसके साथ 'ना' न लग जाये, जिससे हम वेदना के भँवर जाल में फँसे रह जायें। नीचे की दिशा–वसुन्धरा पर रहते हुए यदि हम वेद से जुड़ेंगे, तो शेष पाँचों दिशायें हमारे लिए विद् ज्ञाने, विद् सत्तायम्, विद् लृ लाभे की वर्षा करने लगेंगी। हम जानने– समझने लगेंगे, हम अच्छी प्रकार रहने–जीने लगेगें, हम चिन्तन–मनन करने वाले बनेंगे, स्वशरीर व संसार का सूझ–बूझ के साथ समन्वय करने वाले बनेंगे, और लोक–परलोक की उपलब्धि एवं सम्पादन में समर्थ होंगे। आपने देखा, वेद की हां में हां मिलाने से हमें मिलता है प्रेय–श्रेयदायी उपरोक्त पञ्चामृत जिसमें ज्ञान, अस्मिता, विचारणा, चेतना एवं शुभ लाभ का मधुर मिश्रण, हर पल हमें वेदना से बचाता है। वेद के साथ हामी भरने का चमत्कारी लाभ मानव को कैसे मिलता है? वेद से ही पूछते हैं।

ऋचंवाचं प्रपद्ये मनो यजुः प्रपद्ये साम प्राणं प्रपद्ये चक्षुः श्रोत्रं प्रपद्ये। वागोजः सहौजो मयि
प्राणापानौ।। यजुर्वेद 36.1।।

वाणी का आश्रय लेकर मैं ऋग्वेद की ऋचाओं की शरण में जाता हूँ। मेरी वाणी ज्ञान व सत्य का वाचन करने लगती है। मन का आश्रय लेकर मैं यजुर्वेद के अध्यायों की शरण में जाता हूँ। इसके स्वाध्याय से मेरा मन यज्ञीय कर्मो में लग जाता है। मैं अपने प्राण व जीवनी शक्ति का आश्रय लेकर सामवेद के साम मन्त्रों की शरण मे जाता हूँ। मैं बोलने में, लोग सुनने में आनन्दित होते हैं। मैं अपने श्रोत्रों का आश्रय लेकर चक्षु, ब्रह्मवेद–अथर्ववेद के विज्ञान की शरण में जाता हूँ मेरा दृष्टिकोण वैज्ञानिक, तर्कपूर्ण, ज्योतिर्मय बनजाता है। सार तत्व यह है कि (वाग ओजः) सत्यवाणी के बल से (सहओजः) सहयोग का बल बढ़ जाता है। पारस्परिक एकता से (मयि प्राणापानौ) मुझमें दोषों की निवृति होकर प्राणशक्ति का संचार हो जाता है। मेरे जीवन में चार वेद उनके चार व्रतों के रूप में जीवन्त हो उठते हैं। पण्डित हरिशरण सिद्धान्तालंकार के इस पदार्थ में महर्षि दयानन्द का भावार्थ जोड़ दें तो मन्त्रार्थ में चार चाँद लग जाये लग जायेंगे। "हे विद्वानों! तुम लोगों के संग से मेरी ऋग्वेद के तुल्य प्रशंसनीय वाणी, यजुर्वेद के समान मन, सामवेद के सदृश प्राण और सत्रह तत्वों से युक्त लिङ्गशरीर स्वस्थ, सब उपद्रवों से रहित और समर्थ होवे।" आपने देखा–वेद के साथ हामी भरने से मनुष्य के समग्र आचार–विचार–व्यवहार एवं व्यक्तित्व में निखार आ जाता है। उसके पाँच प्राण, पाँच ज्ञानेन्द्रियां, पाँच कर्मेन्द्रियां, मन व बुद्धि रूपी सत्रह तत्व सुखर–मुखर–प्रखर ओजस्वी हो जाते हैं।

लोक कल्याण का ध्येय धारणकर्त्ता शासक ऐसा प्रबन्धन करते थे कि वेद का सन्देश वातावरण में बहता रहे और जन जन "संश्रुतेन गमेमहि मा श्रुतेन विराधिषि" (अथर्व. 1.1.4) वेद के अनुकूल चलें प्रतिकूल नहीं। महात्मा विदुर ने अपना अनुभव व्यक्त करते हुए कहा है– श्रुतं प्रज्ञानुगं यस्य प्रज्ञा चेव श्रुतानुगा। असम्भिन्नर्यमर्यादः पण्डिताख्यांलभेत च।।" विदुरनीति 130।। जिसका शास्त्रज्ञान विवेक बुद्धि का अनुसरण करता है और बुद्धि शास्त्र ज्ञान के अनुकूल चलने वाली है, जो आर्य मर्यादाओं का उल्लंधन नहीं करता, वह व्यक्ति पण्डित कहलाता है। "बुद्धिश्रेष्ठानि कर्माणि बाहु मध्यानि भारत ! तानि जंघाजघन्यानि भारप्रत्यवराणि च।।" 3.74।।हे भारत !बुद्धि से सिद्ध होने वाले कार्य उत्तम, भुजबल से होने वाले मध्यम, जो लुक छिप कर भागदौड़ से किये जायें वे अधम और जो सिर पर संकट डाल दें वे कार्य नीचतर होते हैं। विश्व के प्रथम महर्षि सम्राट मनु ने "वेदोऽखिलो धर्ममूलम्" (मनुस्मृति अध्याय–2 श्लोक 6) कहते हुए धर्म के चार मूल स्रोत वर्णित किये हैं– यथा अखिल वेद, स्मृति, सदाचार, आत्म तुष्टि अर्थात् जिस कार्य के करने से आत्मा में भय, शंका व लज्जा न उत्पन्न हो अपितु सात्विक सन्तुष्टि व प्रसन्नता अनुभव हो, ये चार 'धर्ममूलम्' धर्म के मूलस्रोत व आधार हैं। राजाओं, राजपुरोहितों एवं राष्ट्र सेनानायकों ने सृष्टि के शुभारम्भ से करोड़ों वर्ष तक धरती पर ऐसी ही सत्ता को स्थापित व सुख सम्पादित रखा। सभी ने जन–जन में वेद की धारणा को दृढ़ बनाये रखा। सभी कहते थे वेद–हां और पास नहीं आती थी–वेदना। वैदिक युगीन सम्राट वेद के प्रति इतने संवेदलशील थे कि वे वेद की अवज्ञा करने वालों को आर्यवर्त की वसुधा पर रहने नहीं देते थे। उनको मिटाते नहीं–बसाते थे। उन्हें विमान या जलयान में भरकर सागर पार कर देते थे और उनके लिए जीवन–यापन की व्यवस्था भी कर देते थे। इस तथ्य को मैं महर्षि के पूना–प्रवचन के आधार पर प्रकट कर रहा हूँ। कुछ सौ वर्ष पूर्व यही कार्य इंग्लैण्ड ने भी किया था, जिससे अमेरिका व आस्ट्रेलिया जैसे राष्ट्रों का उदय हुआ। आर्यावर्त में जहां वेद के अध्यात्म व विज्ञान में समन्वय किया जाता रहा है, वहीं ये द्वीप–द्वीपान्तर में नव गठित देश विज्ञान की भौतिक सुखदायी विभूतियों में रमण करने लगे। जहाँ इन्होंने विद्या अनुशासन, शोभा स्वच्छता व समृद्धि में असीम उन्नति की, वहाँ उन्होंने नैतिक सदाचार को दरकिनार कर दिया। इतने पर भी आर्यावर्त या भारत निखिल विश्व का चक्रवर्ती सम्राट बना रहा। रामायण काल में वेद के साथ हुई 'हाँ–ना' की उठा–पटक का उदाहरण यहाँ पर अप्रासंगिक नहीं होगा। राम चार भाई थे। रावण भी चार भाई थे। राम ने ऋषि वसिष्ठ–विश्वामित्र के गुरुकुलों में जाकर वेद की आध्यात्मिक, वैज्ञानिक व व्यावहारिक शिक्षा ग्रहण की और उसका राष्ट्रोत्थान व जन कल्याण में वितरण किया। रावण ने भी तपस्या पूर्वक वेद का अध्ययन ही नहीं, प्रत्युत उसका भाष्य भी किया किन्तु वह वेद के अधयात्म–दर्शन को एक ओर छोड़कर उसके विज्ञान–रथ पर आरूढ़ हो गया। "माभ्राता भ्रातर द्विक्षत्" (अथर्व 3.30.3) भाई–भाई से द्वेष न करें–वेद के इस आदेश के प्रति राम ने कहा–हाँ। चारों भाई हर सुखदा–विपदा की स्थिति में परस्पर आबद्ध बन्धु एक बने रहें। वेद वर्चस्व के लिए आततायियों के ध्वंस हेतु वनगमन की स्थिति में राम चित्रकूट धाम में रहें, तो अनुज भरत अयोध्या के सिंहासन पर नहीं जाकर नन्दीग्राम में रहे। इस वेद वाक्य को रावण ने भी पढ़ा था किन्तु गढ़ा नहीं। देवताओं के कोषाध्यक्ष कुबेर द्वारा बसाई गई स्वर्णमयी लंका नगरी में ही जाकर अधिकार कर लिया, उनका पुष्पक विमान भी हथिया लिया, जिसपर सवारी करके अपने अग्रज कुबेर को तंग करने में तो लगा ही रहा, अपने अनुज भ्राताओं के वेदानुकूल सत्यपरामर्श को सुनकर भी कहता चला गया–ना–ना। परिणामस्वरूप वेदनुयायी राम को उसका संहार कुछ इस प्रकार करना पड़ा, कि हर कोई कहने को विवश हो गया– "एक लख पूत सवा लख नाती, ता रावण–घर दिया न बाती" एक ईंट खिसकने से जैसे सम्पूर्ण दीवार दरकने लगती है, वैसे ही वेद–विरोधी अपसंस्कृतियों का अनमेल मिश्रण वेद के सुरक्षा कवच की कीलों को ढीला करने का कोई अवसर हाथ से नहीं जाने देता। राम–भरत भ्राताओं ने मन्थरा के विष–वमन को नीलकण्ठ बनकर उसे कण्ठ से नीचे उदर तक उतरने नहीं दिया। अवसंस्कृति का संवाहक महाभारत काल में मामा शकुनि बनकर आ गया, तो सेविका मन्थरा से उसके मामा का ममत्व संबन्ध भारी पड़ गया। वेद के भेद को बिना समझे दुर्योधन ने कह दिया था–ना, फिर तो उसने गुरू, पितामह, पिता–माता सभी के निर्देश ठुकरा कर कह दिया–ना–ना। सर्वमान्य योग योद्धा श्री कृष्ण के सन्धि–प्रस्ताव के प्रति भी कह दिया था–ना–ना–ना। चक्र सुदर्शनधारी मुरली मनोहर माधव का उद्घोष– "परित्राणाय साधूनां विनाशायच दुष्कृताम्" सफलीभूत हुआ। निज सेना, सम्बन्धी, भाईयों के साथ दुर्योधन तो मारा ही गया, किन्तु सनातन वेद–संस्कृति के स्तम्भों को शिथिल कर गया। फल स्वरूप विगत पाँच सहस्र वर्षों के अन्तराल में वेद के लिए 'ना' कहने वाले अपना सर उठाने लगे। आर्यावर्त भारत के जो चिरन्तन आदर्श पुरुष या नारियाँ थीं उनके श्रेष्ठ

शेष पृष्ठ 07 पर ☞

thearyasamaj.org

उत्कृष्ट शङ्का समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

शंका–खराब काम करने वाले को खराब योनि मिलती है। आज पचहत्तर प्रतिशत व्यक्ति खराब काम करते हैं, फिर भी संसार में मुनष्यों की संख्या क्यों बढ़ती ही जा रही है? क्या सभी अधिकारी जीवों का मुक्ति–काल समाप्त हो गया हैं, क्या वे मुक्ति से लौटकर आ रहे हैं?

समाधान – पिछले पचास वर्षों में तो मनुष्यों की संख्या (पॉपुलेशन) बढ़ती जा रही है। पहले भारत की संख्या तीस करोड़ थी, आज सौ करोड़ से ऊपर चली गयी। पूरी धरती की संख्या तीन अरब थी, आज सात अरब हो गई। जनसंख्या इतनी क्यों बढ़ रही है, क्या अच्छे काम ज्यादा हो रहे हैं? इस सवाल का जबाब है–

● एक कारण है कि 'आत्मा' मुक्ति से लौट रहे हैं। इसलिए संख्या बढ़ रही है। सारे मुक्ति से नहीं आ रहे हैं। मनुष्यों की संख्या इस कारण से नहीं बढ़ रही है। दरअसल, मुक्ति में से तो कोई–कोई आता होगा। लेकिन वो हमें पता नहीं चलता। गत वर्षों में मनुष्यों की संख्या तेजी से बढ रही है, उसके कई कारण हैं।

● **दूसरा कारण** – एक व्यक्ति ने दस साल तक मेहनत की, व्यापार में खूब पैसा कमा लिया और आगे जाकर उसने व्यापार बंद कर दिया। अब वो व्यापार नहीं कर रहा। लेकिन पिछले दस साल में उसने जो कमाया, उसको बैठ के खा रहा है। उसे इसका पूरा अधिकार है।

इसी तरह इस समय जो मुनष्य लोग हैं, वो पहले कमाई करके आए हैं वे अच्छे कर्म करके आए हैं। इसीलिए मनुष्य योनि में आए हैं। वे पिछली कमाई खा रहे हैं। लेकिन यदि इस जन्म में वे अच्छे काम नहीं कर रहे हैं, तो आगे उनको मनुष्य जन्म नहीं मिलेगा। वे मोक्ष के अधिकारी नहीं होंगे। वे पशु–पक्षी, कीड़े–मकोड़े की योनि में स्थानांतरित (ट्रांसफर) हो जाएंगे। उनको बुरे कर्मों का यह दण्ड मिलेगा। और जब दण्ड भोग लेंगे, कर्म–दण्ड पूरा हो जाएगा, तब वे फिर मनुष्य योनि में आ जाएंगे। इसका न आपको पता चलेगा और न मुझे।

अनुमान प्रमाण है कि ईश्वर न्यायकारी है, वह बिना कर्म के फल नहीं देता। जिसने बुरा कर्म किया, उसको बुरा फल दिया। जिसने अच्छा कर्म किया, उसको अच्छा फल दिया।

● आजकल तो तेजी से मनुष्यों की संख्या बढ़ रही है, उसका कारण यह नहीं है कि, मुनष्य लोग अच्छे कर्म कर रहे हैं। दरअसल, जो बुरे कर्म करके पशु–पक्षी, कीड़ों–मकोड़ों और पेड़–पौधों की योनि में गए थे, वे अपना दण्ड भोगकर, कर्मफल पूरा करके मनुष्य योनि में आ गए हैं। यह मुनष्यों की संख्या बढ़ने का एक कारण है।

यहाँ कर्मफल के तीन नियम समझने पड़ेंगे–

(1)**पहला नियम** – एक व्यक्ति अपने पूरे जीवन में यदि पचास प्रतिशत अच्छे और पचास प्रतिशत बुरे कर्म करता है यानि बराबर मात्रा में (इक्वल) पचास–प्रचास अच्छे–बुरे कर्म हैं। यहाँ पहला नियम कहता है कि–

''समान मात्रा में अच्छे बुरे कर्मों को करने से व्यक्ति को तुरंत अगला जन्म साधारण मनुष्य का मिलेगा।''

साधारण मनुष्य का मतलब जिसे आप आजकल की भाषा में फोर्थ–क्लास फैमिली जैसे – मजदूर, चपरासी, पटेवाला कहते हैं। एक तरीका मनुष्य बनने का यह है।

(2)**दूसरा नियम** – यदि कोई व्यक्ति अपने पूरे जीवन में पचास प्रतिशत से अधिक अच्छे कर्म करता है, जैसे – मान लिया कि साठ प्रतिशत अच्छे कर्म करता है, और चालीस प्रतिशत बुरे कर्म करता है। उसके अच्छे कर्म अधिक हैं, इसलिए प्रमोशन होगा। फोर्थ क्लास से थर्ड क्लास फैमिली में आ जाएगा। मजदूर, चपरासी से ऊँचे घर में, कोई बुद्धिमान, सेठ, धनवान, किसी क्षत्रिय के घर में जन्म होगा। इसी तरह से यदि अच्छे कर्म का प्रतिशत बढ़ता जाएगा, साठ की बजाय सत्तर प्रतिशत अच्छे कर्म किए तो और ऊँचे घर में जन्म मिलेगा। अस्सी प्रतिशत अच्छे कर्म किए तो और ऊँचे घर में जन्म मिलेगा। जहाँ पर धार्मिक, विद्वान माता–पिता हों, सदाचारी हों, देशभक्त हों, ईश्वर–भक्त हों, ईमानदार हों, ऐसे–ऐसे अच्छे परिवार में जन्म मिलेगा। जहाँ पर धार्मिक, विद्वान माता–पिता हों सदाचारी हों, देशभक्त हों, ईश्वर–भक्त हों, ईमानदार हों, ऐसे–ऐसे अच्छे परिवार में जन्म मिलेगा। और यदि सौ प्रतिशत अच्छे और निष्काम कर्म करेगा, तो उसका मोक्ष हो जाएगा। यह दूसरा नियम है–

''यदि आपके कर्म पचास प्रतिशत से ज्यादा अच्छे हैं, और बुरे कम हैं, तो भी मुनष्य बनेंगे।''

तो इस नियम से भी तुरंत मनुष्य बन सकते हैं।

(3)**तीसरा नियम** –यदि कोई व्यक्ति बुरे कर्म पचास प्रतिशत से अधिक करता है, और अच्छे कर्म पचास प्रतिशत से कम। मान लीजिए साठ प्रतिशत बुरे कर्म किए, और चालीस प्रतिशत अच्छे कर्म किए। अब साठ और चालीस में कितना अंतर है? बीस प्रतिशत का। तो बीस प्रतिशत बुरे कर्म अच्छे कर्मों की तुलना में उसने अधिक किए। अब यहाँ बीस प्रतिशत पाप अतिरिक्त हैं, अधिक हो जायेंगे, तो तुरंत अगला जन्म मनुष्य का नहीं मिलेगा।'' अब उसका दंड भोगने के लिए नीचे उतरना पड़ेगा। कुत्ता, बिल्ली, हाथी, गाय, घोड़ा, मक्खी, मच्छर, बंदर, सुअर, साँप, आम, पीपल आदि–आदि बनना पड़ेगा। जब तक नीचे इन बीस प्रतिशत पापों का दंड पूरा नहीं भोग लेगा, तब तक वापस लौट के मनुष्य नहीं बनेगा। तब तक वहीं चक्कर काटेगा।

यदि कोई पशु–पक्षी, कीड़ा–मकोड़ा बना हुआ था, तो वो कैसे बना था, पहले यह समझ लीजिए। पुण्य की तुलना में अधिक पाप किए, तो तीसरा नियम यह कहता है कि–

''जब पाप अधिक बढ़ जाएगा, तो पहले उसका दंड भोगने के लिए कुत्ता–बिल्ली, पशु–पक्षी, कीड़े –मकोड़े बनना पड़ेगा।''

पहले अन्य योनियों में बीस प्रतिशत पाप का दंड भोगो, जब वो निपट जाए, तब एकाउंट बैलेंस (बराबर) हो जाएगा। चालीस प्रतिशत पाप, चालीस प्रतिशत पुण्य का खाता जब बराबर हो जाएगा, तो फिर लौट के मुनष्य बनेंगे।

तो इस समय जो आप कह रहे हैं न कि मुनष्य की संख्या बढ़ती जा रही है, यह इस नियम से बढ़ रही है। कीड़े–मकोड़े, मक्खी, मच्छर अपना दण्ड भोगकर, मनुष्य योनि में लौट के वापस आ रहे हैं। उनका नंबर आ गया है मनुष्य बनने का।

मुक्ति से लौटना एक कारण, मनुष्य से मनुष्य बनना दूसरा कारण और मुनष्यों में ज्यादा अच्छे कर्म करके फिर अच्छे परिवार में जन्म लेना तीसरा कारण, कीड़े–मकोड़े से लौटकर वापस मनुष्य बनना–चौथा कारण। और किसी अन्य लोक–लोकांतर से यहाँ ट्रांसफर होकर मनुष्य जन्म लेना, यह मनुष्य की संख्या बढ़ने का पाँचवाँ कारण है। ऐसे बहुत सारे कारण हैं, जिसकी वजह से यहाँ जनसंख्या (पॉपुलेशन) बढ रही है। चौथा वाला कारण ज्यादा ठीक लग रहा है। और भी कारण थोड़े–थोड़े होंगे।

दर्शन योग महाविद्यालय
रोजड़ वन, गुजरात

योग-ध्यान, साधना शिविर

आनन्दधाम (गढ़ी आश्रम) उधमपुर, जम्मु में पूज्य महात्मा चैतन्यमुनि जी के सान्निध्य में दिनांक 14 से 21 सितम्बर–2014 तक निःशुल्क योग–ध्यान–साधना शिविर का आयोजन किया गया है। जिसमें अनुभवी आचार्यों एवं महात्माओं द्वारा उपासना, प्रणायाम, योगासन आदि कराए जाएंगे तथा दर्शन–पठनपाठन की भी व्यवस्था है। साधक अपनी शंकाओं का समाधान भी कर सकेंगे। इस अवसर पर सामवेद–पारायण यज्ञ भी होता है। आश्रम में पूज्य महात्माजी के सानिध्य में पहले लगाए गए शिविरों में शिविरार्थियों के बहुत अच्छे अनुभव रहे हैं इसलिए साधकों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है।

thearyasamaj.org

नामकरण संस्कार का महत्त्व

● पण्डित वेद प्रकाश शास्त्री

नामकरण का काल– शास्त्रों के अनुसार ग्यारहवें दिन नाम रखना चाहिए। यदि कारणवश उस दिन न हो सके तो 101 वें दिन करें। आजकल बच्चे के जन्म के पश्चात् उसका पंजीकरण नगर पालिका/ग्राम पंचायत में निश्चित समय के अन्तर्गत कराना अनिवार्य है। अतः शिशु एवं माता के स्वस्थ होने पर नामकरण ग्यारहवें दिन सर्वाधिक उपयुक्त है। यदि चिकित्सीय असमर्थता हो तो 21, 31 दिन बाद भी कर सकते हैं। इसमें कोई दोष नहीं। अन्धविश्वास में न पड़ें। सरकारी/प्राइवेट अस्पताल भी बच्चे का प्रमाणपत्र देते हैं परन्तु बच्चे का नाम उसी समय लिखते हैं। अतः बच्चे के जन्म के पश्चात सार्थक, सरल–सुन्दर नाम का चयन कर लें और उसे ही अस्पताल/ग्राम पंचायत/नगरपालिका में दर्ज करवाएँ। यही नाम स्कूल में भी प्रविष्ट कराएँ। कई व्यक्ति कुण्डली के आधार पर नामकरण करते हैं, पण्डित से पूछते हैं। ऐसे सज्जनों से निवेदन है कि अनेक बार कुण्डली का नामाक्षर ठीक नहीं निकलता, भद्दा निकलता है। ऐसी विषम परिस्थिति में अभिभावक ज्योतिषीय विचार के लिए कुण्डलीय नाम का उपयोग करें परन्तु स्कूल में प्रवेश के समय सुन्दर नाम का ही प्रयोग करें। कुण्डली में भी एक जन्म नाम और दूसरा प्रसिद्ध नाम होता है। अतः प्रसिद्ध नाम सरल, सुन्दर, सार्थक होना चाहिए तभी नामकरण की सार्थकता है। नाम का चयन जन्म के समय ही कर लें। नामकरण संस्कार/समारोह सुविधानुसार निर्धारित समय पर करें।

नाम करण का महत्त्व– मानव जीवन में नामकरण का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान है। संसार में जितनी भी वस्तुएं है चाहे वे जड़ हों या चेतन, उनका कोई न कोई नाम अवश्य है। यदि उनका नामकरण न किया जाए तो उन्हें संबोधित ही नहीं किया जा सकता। जिन नई वस्तुओं का आविष्कार होता है या बनती हैं, पहले उनका नामकरण ही किया जाता है, जिससे उन्हें उस नाम से सम्बोधित किया जा सके। एक दूसरे से भिन्नता प्रकट करने एवं व्यवहार में लाने के लिए वस्तु, स्थान, व्यक्ति, जीव–जन्तु आदि का नामकरण अत्यावश्यक है। महर्षि पतञ्जलि कहते हैं–

व्यवहारार्थ संज्ञाकरणं लोके।

नामकरण संसार में व्यवहार अर्थात् बुलाने के लिए होता है। जब हम किसी से मिलते हैं तो सबसे पहला हमारा प्रश्न यही होता है कि आपका नाम क्या है? सभी धर्म, जाति, सम्प्रदाय एवं विभिन्न विचारधाराओं वाले व्यक्तियों में नामकरण संस्कार अवश्य प्रचलित है। हाँ, नामकरण की विधि, पद्धति, प्रथा, रीति–रिवाज में भले ही अन्तर हो। परन्तु इतना निश्चित है कि नामकरण सभी व्यक्ति अवश्य करते हैं क्योंकि इसके बिना हमारा काम चल ही नहीं सकता। कोई अपनी प्रचलित परम्परा के अनुसार करता है और कोई वैसे ही मौखिक रूप से अपनी पसन्द के अनुसार पुकारने लगता है।

नामकरण की सार्थकता– महर्षि दयानन्द ने 'संस्कार विधि' में लिखा है कि बालक–बालिकाओं के नाम सार्थक, सरल, सरस, कोमल और सुस्पष्ट होने चाहिए।

जब हमें बच्चे का नाम रखना ही है तो ऐसा नाम क्यों न रखें जो सार्थक हो, अर्थ ठीक निकले, सरलता से पुकारा जा सके, सुनने में सरस और कोमल हो। पुकारते ही नाम का अर्थ भी समझ में आ जाए तभी नामकरण की सार्थकता है।

केवल अपनी पसन्द और रूचि को ही महत्त्व नहीं देना चाहिए अपितु साथ में यह भी देखें कि नाम का कोई उपयुक्त अर्थ भी निकलता है या नहीं?

कई बार नाम तो सार्थक होता है परन्तु होता बेमेल है। यथा–पार्थ। पृथा का पुत्र अर्जुन। अन्य कोई भी व्यक्ति पार्थ नाम नहीं रख सकता क्योंकि उसकी माता का नाम पृथा नहीं होगा तब यह पार्थ कहलाने का अधिकारी कैसे बना गया? अतः 'पार्थ' नाम सार्थक होते हुए भी हर एक के लिए नाम रखना उचित नहीं है। राघव भी ऐसा ही शब्द है जो रघुवंश में पैदा हुआ हो, वह राघव कहला सकता है। श्रीकृष्ण यादव थे क्योंकि वह यदुवंश में जन्मे थे। परन्तु यादव नाम कोई भी नहीं रखता क्योंकि आजकल 'यादव' शब्द जाति सूचक बन गया है जबकि 'राघव' शब्द नहीं बन सका।

नाम के उच्चारण में सौम्यता भी प्रकट होनी चाहिए, कर्कशता, क्रूरता नहीं। यथा–चण्डी या चण्डिका, जालिम सिंह या शैतान सिंह।

नाम सोद्देश्य होना चाहिए। जैसे–यदि हम चाहते है कि बच्चा नम्र बने तो उसका नाम 'विनीत' रखें, सुशील नामकरण करें।

यथा नाम तथा गुण– सामान्यतः व्यक्ति की यही कामना रहती है कि जैसा बच्चे का नाम रखा गया है उसमें वैसा ही गुण भी हो। परन्तु यह तो भविष्य की बात है कि बच्चे में नाम के अनुसार ही गुण आते भी हैं या नहीं। नाम के विपरीत भी गुण आ सकते हैं। यथा किसी बच्चे का नाम रखा गया–'विद्या सागर', लेकिन वह निकल गया 'काला अक्षर भैंस बराबर'। विवशतः अब कुछ किया भी नहीं जा सकता। उसे विद्वान बनाना कष्ट साध्य ही नहीं असम्भव भी है। नाम भी नहीं बदला जा सकता। अब यह अच्छा भला नाम छोड़कर गुणहीनता सूचक नाम भी कैसे रखा जाए? ऐसा करना और भी हास्यापद होगा। अतः जैसा नाम रखा गया है, वही चलाने दिया जाए।

नाम के अनुसार गुण न भी आएँ तो भी अच्छे नाम ही रखने चाहिए। यदि नाम के अनुसार गुण नहीं हैं तो क्या हुआ। अन्य अच्छे गुण भी हो सकते हैं। सभी गुणों के आधार पर तो नाम नहीं रखे जा सकते। नाम एक ही होता है और गुण अनेक होते हैं।

कबीर अनपढ़ थे फिर भी उनका काव्य पठनीय है! अनेक तर्कों के द्वारा उन्होंने अन्धविश्वास, रूढ़िवाद, पाखण्ड, आडम्बर, हिन्दू–मुस्लिम वैमनस्य, जातिगत–वर्णव्यवस्था आदि कुरीतियों का खण्डन किया।

कई राजे–महाराजे भी अशिक्षित थे परन्तु राजनीति में अत्यन्त कुशल थे और अपनी कर्त्तव्यपरायणता से उन्होंने जनमानस पर अपनी धाक जमा दी।

इस प्रकार पुस्तकीय विद्या न होने पर भी उन्हें बुद्धिमान चतुर और कार्यकुशल तो मानना ही पड़ेगा।

निष्कर्ष रूप में हम यही कह सकते हैं कि बच्चों के नाम सुन्दर, सरल और सुबोध होने चाहिए। बुरे नाम पहले से ही क्यों रखें?

विदेशी संस्कृति का प्रभाव– आज विदेशी सभ्यता–संस्कृति के प्रभाव से जीवन का कोई भी क्षेत्र अछूता नहीं रहा है। अतः बालक–बालिकाओं के नाम भला कैसे अप्रभावित रहते? नवीनता, आधुनिकता की चकाचौंध और अन्य लोगों के कुछ विशेष प्रदर्शित करने के चक्कर में फँस कर कई लोग ऐसे नाम रख लेते हैं जो सुनने में आकर्षक प्रतीत होते हैं। परन्तु उनका कोई अर्थ नहीं निकलता या ऐसा अर्थ निकलता है जिसे सुनकर हँसी आती है या आश्चर्य होता है। साथ ही नामकरण करने वाले की अज्ञानता भी प्रकट होती है। यथा–टीना, पैंसी, पिंकी, साहिल, आरिफ, महक, टार्जन, रिंकू, टिंकू, पिंकू, सोनू, मोनू, विंकल, मोनिका, सोनिया, किट्टी, डेज़ी, नानू, मिनाली, सोनाली, सुहेल, कबीर, किशमिता, अशमिता, तमन्ना, चाहत, लवलीन, शीनू, शकील आदि इसके ज्वलंत उदाहरण हैं। पास पड़ोस में देखने पर ऐसे अनेक नाम मिल जाएँगे जिन पर पश्चिमी अथवा इस्लामिक सभ्यता का प्रभाव स्पष्ट झलकता है। ऐसे नाम रखने में लोग गौरव का अनुभव करते हैं। वस्तुतः अपनी सभ्यता और संस्कृति की रक्षा के लिए ऐसे नाम रखने से हमें संकोच करना चाहिए।

निरर्थक नामों का त्याग– महर्षि दयानन्द के आगमन से पूर्व बच्चों का कोई न कोई नाम रखना ही होता था, इसलिए रख लेते थे क्योंकि इसके बिना उसे पुकारा नहीं जा सकता था। यथा– झंडाराम, गंडाराम, आयाराम, गयाराम, कोकई, बेचन, पंजासिंह, झूलेलाल, मिठाईलाल, शादीलाल, गोबरे, मंगासिंह, तोतासिंह, अंग्रेजसिंह, जट्टूराम, दुखीराम, दुखनलाल, भीखाभाई, भिखारीदास, रेलूराम, पल्टूदास, कालूसिंह, पोपटलाल आदि।

और महिलाओं के–पारोबाई, सत्तोबाई, झुरिया, भीमा, हुक्मी, रक्खो, सुग्गी, धनिया, हिरिया, सन्तो, जट्टूबाई, धनू देवी, मंगलो, परोसिना, बीरमादेवी, जीरो, पन्दो, छिना, सरदरों, सुन्तारानी, नीलो जैसे नाम रखना उस समय आम बात थी। ग्रामीण क्षेत्रों, पिछड़ावर्ग और अशिक्षित जनता में आज भी ऐसे ही नाम रखे जाते हैं।

अज्ञानतावश निरर्थक या अस्वाभाविक नाम रखने का भी अत्यधिक प्रचलन है जिसके बारे में कोई सोच विचार नहीं करते। यथा–बच्ची का नाम–परिणीता। वस्तुतः इसका अर्थ है–विवाहिता। ज़रा सोचिए, क्या जन्मते ही बच्ची विवाहिता हो गई अथवा विवाहिता ही जन्मी? बच्चे का नाम रखा–अक्षम। इसका अर्थ है–कमजोर। क्या परिवार कमजोर बच्चा चाहते हैं, स्वस्थ नहीं? वस्तुतः ऐसे नामों की उपेक्षा की जानी चाहिए।

1. नामकरण के समय सावधानियाँ– नामकरण करते हुए सचेत रहें कि जो नाम रख रहे हैं, वह पूर्ण या आंशिक रूप से बालक–बालिका के अनुकूल भी हो। यथा–बच्चे का नाम रखा–नन्हा, नन्हें। अर्थ है–छोटा। क्या बच्चा छोटा ही रहेगा, बड़ा न होगा? और जब बड़ा हो गया तो 'नन्हा' नहीं रहा। फिर भी लोग 'नन्हें' कहकर अनेक बार उपहास भी करेंगे। 'छोटूराम, छोटेलाल' भी ऐसे ही नाम हैं। तभी तो काका हाथरसी कहते हैं–

नाम रूप के भेद पर कभी किया है गौर?
नाम मिला कुछ और तो शक्ल अक्ल कुछ और।।

'काका' छः फुट लम्बे छोटूराम बनाए।
नाम दिगम्बर सिंह वस्त्र ग्यारह लटकाए।

2. महापुरूषों, देवी–देवताओं के नाम पर नामकरण करते समय पिता–पुत्र, माता–पुत्री, बहन–भाई आदि के नामों के सम्बन्धों का भी ध्यान रखें। कहीं ऐसे असंगत नाम न रखे जाएँ, जिस पर लोग व्यंग्य करें। काका हाथरसी के शब्दों में–

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

thearyasamaj.org

(कारागारीय संस्मरण)

हवन करेंगे – हवन करेंगे

● डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा

इस बार मैं नित्य की भांति कारागार गया। कारागार अधीक्षक महोदय से मिला। शिष्टाचारवश सामान्य बातें हुई। मैंने उनसे निवेदन किया कि बच्चों (अट्ठारह से इक्कीस वर्ष तक) के बैरक में तो हवन होता ही रहा है। क्यों न इस बार बड़े बंदियों की बैरक में हवन किया जाय। इस पर अधीक्षक महोदय ने प्रसन्नता जाहिर की। जेलर साहब भी वहीं विद्यमान थे। निश्चय हुआ कि शनिवार को सुबह सात बजे बैरक नं. पाँच में हवन किया जाय। अधीक्षक महोदय ने अपने मुख्य बन्दी सेवक को आदेश दिया कि सभी बंदियों को सूचित कर दो कि सभी बन्दी हवन में उपस्थित हों।

मैं शनिवार को प्रातः काल साढ़े पाँच बजे आश्रम से निकला कुछ पद यात्रा की और कुछ वाहन. यात्रा करके पौने सात बजे कारागार पहुँच गया फिर मुख्य द्वार के रजिस्टर पर हस्ताक्षर किए, समय अंकित किया और मोबाइल जमा किया। सम्बन्धित अधिकारी की अनुमति पाकर मैं प्रमुख बन्दी सेवक के साथ कारागार के अभेद्य दुर्ग (बैरक नं. एक) में सहमते हुए प्रवेश कर ही गया। बैरक के द्वार में प्रवेश करते ही जहाँ पुलिस कर्मियों ने मुझे सशंकभाव से देखा वहीं द्वार पर तैनात बन्दी कर्मचारियों ने मेरे साथ के प्रमुख बन्दी से आँखों ही आँखों में सांकेतिक भाषा में पूछा कि ये महाशय कौन हैं, बन्दी, अधिकारी या अन्य कोई? तब अधीक्षक महोदय के प्रमुख बन्दी सेवक ने सबकी जिज्ञासा का उपशमन करते हुए कहा, "बड़े साहब ने भेजा है। पंडित जी बैरक नं. पाँच में हवन करेंगे।"

मैं मन ही मन सोचने लगा, यदि मेरे साथ अधीक्षक महोदय का सेवक न होता तो मुझे भी भ्रमित या अर्द्ध विक्षिप्त समझ कर कारागार में बन्दी बना लिया जाता क्यों कि कारागार में दो प्रकार के व्यक्ति रहते हैं बन्दी और पुलिस कर्मी। जब मैं हवन का समान तथा पुस्तकें लेकर बैरक नं. दो में पहुँचा तो लगभग 50–60 बन्दी मुझ अप्रत्याशित अजनबी को घूर रहे थे और मैं मृदु मुस्कान के साथ उन्हें निहार रहा था। थोड़ा सा आगे बढ़ने पर पीछे से आवाज आई, "हवन करेंगे–हवन करेंगे" मैंने विस्मित होकर पीछे मुड़ कर देखा तो एक बन्दी ने मुस्करा कर मेरा अभिवादन किया। फिर मैं बैरक नं. तीन को सकुशल पार कर गया। जब मैं बैरक नं. चार में पहुँचा तो फिर उसी प्रकार का स्वर सुनाई पड़ा, 'हवन करेंगे–हवन करेंगे' इस बार मैंने पीछे मुड़ कर नहीं देखा, सोचा, कहीं ये मेरी मजाक न उड़ा रहे हों? मैंने अनुमान किया कि हवन के बाद शायद ये लोग कोई गीत प्रस्तुत करेंगे और ये उसी के बोल होंगे।

मैंने साथ चलने वाले बन्दी से पूछा, "ये लोग क्या गा रहे हैं? हवन तो किया जाता है, गाया नहीं जाता।"

इस पर वह बन्दी जोर से हँसा और बौला "पंडित जी, आप तो बहुत भोले–भाले इन्सान हैं। आपको पता नहीं क्या, एक पिक्चर है, उसका नाम है, 'भाग मिल्खा भाग' उसी का यह गाना है।"

"तो क्या मिल्खा सिंह उस पिक्चर में हवन करता है?" मैंने अज्ञानतावश पूछा।

इस पर वह और जोर से हँसा और बोला,"पंडित जी, वह हवन नहीं करता, वह तो कमर मटकाते हुए, नाचते हुए कहता है–"हवन करेंगे–हवन करेंगे"

मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। आर्यों के परम पावन हवन–यज्ञ के साथ इतना बड़ा भद्दा मजाक, फिल्मीकरण करके उसकी मूल भावना को समाप्त कर देना। जिस हवन का नाम लेते ही मन में पवित्र भाव उत्पन्न हो जाते हैं। जिसके द्वारा पर्यावरण शुद्धि होती है, मंत्रोच्चारण द्वारा अलौकिक आनन्द की प्राप्ति होती है। उसी 'हवन' शब्द पर लयात्मकता या संगीतात्मकनता की पर्तें चढ़ा कर कमर मटका–मटका कर नाचना कौन सी बुद्धिमानी है? क्या ये लोग गीत के नाम पर अपसंस्कृति को जन्म नहीं दे रहे हैं कि लोगों की हवन प्रति आस्था ही नहीं रहें। क्या हवन गाने–बजाने और नाचने–नचाने का ही माध्यम रह गया है?

इस सन्दर्भ में मुझे शान्ति पाठ का मंत्र याद आया। संध्या–हवन के बाद हम नेत्र बन्द करके शान्त मन से 'द्यौः शान्तिः अन्तरिक्ष शान्ति' आदि मंत्रों का उच्चारण करते हैं। पर इसी को फिल्मी करण के कलुयुषित रंग में रंग कर नाचने–झूमने वाले जोर–जोर से कहते हैं– "शान्ति शान्ति ओम्" ये तमोगुणी गायक क्या जानें 'ओम्' का महत्त्व। इन्हें क्या पता 'शान्ति–शान्ति' में कितना पवित्रता और दिव्यता है। इन्हें कैसे समझायें कि इन मंत्रों पर थिरका नहीं जाता, साधना की जाती है।

हिन्दू धर्म में राम और कृष्ण को अत्यन्त आदर भाव से देखा जाता है। दोनों ही महान आर्य संस्कृति का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसी कारण श्री कृष्ण के साथ 'योगिराज' तथा राम के साथ' मर्यादा पुरूषोत्तम' शब्द जुड़ा हुआ है परन्तु इन फिल्मकारों ने उन को भी नहीं छोड़ा और उन्हें विद्रूपः मॉग के नशे में रंग दिया। क्या आपने वह गाना नहीं सुना, "दम मारो दम, मिट जाए गम, बोलो सुबह शाम, हरे कृष्ण, हरे राम" क्या इन गानों से भारतीय संस्कृति का भला हो रहा है? बेचारे कृष्ण जी को इन्होंने 'माखन चोर, रसिया आदि न जाने कितने विशेषणों से अभिषिक्त कर दिया। ये सारी शरारतें हिन्दू धर्म के साथ ही की जाती हैं, मुस्लिम धर्म या सिक्ख धर्म के साथ ऐसा करके देखें, पता चल जायेगा।

आइये, अब मूल विषय पर आते हैं। अब मैं बैरक नं. पाँच में पहुँचा। वहाँ लगभग दो तीन सौ बन्दी होंगे। कुछ बन्दी दूसरी बैरकों से भी बुलाए गए। नीचे दरियाँ बिछी हुई थी। कुछ बन्दी नीचे बैठ चुके थे और कुछ को मैंने बैठने के लिए निवेदन् किया। माइक खराब पड़ा था। अतः मुझे खड़े होकर जोर से बोलना पड़ा। यह मेरी परीक्षा की घड़ी थी कि मैं शान्ति और अनुशासन स्थापित कर पाता हूँ या नहीं? अतः मैंने खड़े होकर बन्दी भाइयों को सम्बोधित करते हुए कहा,

प्यारे साथियों। एक घंटे के लिए आप लोग वो नहीं हैं, जो आप हैं। थोड़े समय के लिए आप हैं साधक तपस्वी यजमान या योगी। इस समय आप परमात्मा के अति निकट हैं, वह आपकी हर गतिविधि को देख रहा है। आप हवन करेंगे तो परमात्मा हवन को भी देखेगा और शरारत करेंगे तो आपकी शरारत को भी। यह बड़ा अच्छा अवसर है, अपने अपराधों के लिए क्षमा याचना का, माफी माँगने का। यज्ञ कुंड से दूर बैठने वाले साथी यदि आँखें बन्द करके बैठ जाएँ और मन ही मन भगवान् से क्षमा याचना करें तो आपको परम आनन्द और शान्ति की प्राप्ति होगी।

मेरी बात का अच्छा प्रभाव पड़ा। सभी बन्दी आँखें बन्द करके बैठ गए। आगे बैठे हुए बन्दियों ने हवन किया, पुस्तकों में देखकर मंत्रोच्चारण किया। गायत्री मंत्र का उच्चारण करके सबने आहुति दी। बाद में पूर्णाहुति हुई। मैं बीच–बीच में मंत्र का अर्थ, विधि और विधि के कारण को भी स्पष्ट करता जाता। अन्त में भजन हुए। मुस्लिम बंदी भाई भी दूर से मेरी बातों को बड़े चाव से सुन रहे थे। हवन के माध्यम से मैंने यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि यज्ञ प्राणिमात्र का कल्याण करता है।

यज्ञ–हवन सम्पन्न हुआ। मैंने अनुमान किया कि बंदियों के चेहरों पर संतोष है। इसके बाद एक बन्दी मेरे पास आया और बोला, "पंडित जी, हमारी इच्छा है कि यहाँ हर महीने हवन होना चाहिए।"

इस पर मैंने कहा, "मैं आपकी भावना का आदर करता हूँ। मैं आपकी भावना अधीक्षक महोदय के पास पहुँचा दूँगा।" इसके बाद मैंने घर की राह पकड़ी।

230, आर्य वानप्रस्थ आश्रम
ज्वालापुर, हरिद्वार
मो. 9639149995

☞ पृष्ठ 04 का शेष

कहो वेद 'हाँ'...

शुद्ध जीवन–चरित्र में मिलावट करके उनकी उज्ज्वल छवि को अशुद्ध निकृष्ट बनाया जाने लगा। वेदों में पशु हिंसा–यज्ञों में पशुबलि प्रथायें चलाकर वेद विरोधी अनीश्वरवादी शक्तियों के पनपने का वातावरण बन गया। आदिशंकर ने इस भयावह स्थिति को ताड़कर बाल्यकाल से ही इन शक्तियों को परास्त तो कर दिया, किन्तु इसके लिये उन्हें युवावस्था में ही अपना बलिदान देना पड़ा। पता नहीं उस दुष्काल में ऐसी कौन सी अति असह्य स्थिति थी कि वे कह गये– "स्त्रीशूद्रोनाधीयाताम्" स्त्री व शूद्र वेद नहीं पढ़ सकते हैं। फलस्वरूप भारत की सर्वोदयी समरसता में कुछ ऐसा रिसाव हो गया कि पारसी, यहूदी, ईसाई एवं इस्लाम आदि मत–सम्प्रदाय पनप गये, और अपने को धर्म के नाम से प्रचारित करने लगे। वेद के लिये 'हां' कहने वालों की संख्या घटने लगी और 'ना' कहने वालों की संख्या बढ़ने लगी।

युवा आग्नेय संन्यासी शंकराचार्य ने भारत को वैदिक सांस्कृतिक एकता के सूत्र में बाँधने के लिये पूर्व–पश्चिम–उत्तर–दक्षिण सर्व दिशाओं में मठ–पीठ स्थापित किये, किन्तु पवित्र गंगाजल सदृश वेद की सारस्वत धारा को जिस कलश में भरकर भारतभूमि में सर्वत्र रससिक्त करना चाहते थे, वह उसके एक ही छिद्र "स्त्रीशूद्रोनाधीयताम्" के द्वारा बंजर में बहती चली गयी। सदभावना भासित वर्ण व्यवस्था जाति–पांति, ऊंच–नीच, छूआछूत के भेदकारी व्रण–आवरण में फँसकर रह गयी। स्थिति इतनी संतापकारी सिद्ध हुई कि केरल के जिस पावन ग्राम कालाड़ी में आदिशंकर का जन्म हुआ था, वहाँ एक भी वेदधर्मी घर नहीं बचा, सब विधर्मी हो चुके थे। अनेक शताब्दियों तक भारत माता की वीर सन्तानों को विधर्मियों का सामना करना पड़ा। बलात् धर्मान्तरण के विरोध में लाखों आर्य लाल व ललनाओं को अपना बलिदान देना पड़ा। अन्ततोगत्वा उन्नीसवीं शताब्दी में करूणा वरूणालय परमेश प्रभु ने आदि शंकर की परम्परा–परिमार्जन के लिये मूलशंकर को गुजरात प्रान्त के टंकारा ग्राम में अवतरित किया, जिन्होंने महर्षि दयानन्द सरस्वती बनकर भारत की निरीह जनता को वेदों

शेष पृष्ठ 08 पर ☞

thearyasamaj.org

अंग स्पर्श मन्त्र

● हर्षिता गाँधी

ओं वाक् वाक्। ओं प्राणः प्राणः। ओं चक्षुश्चक्षुः। ओं श्रोत्रम् श्रोत्रम्। ओं नाभिः। ओं हृदयम्। ओं कंठः। ओं शिरः। ओं बाहुभ्याम् यशोबलम्।

ओं करतल कर पृष्ठे।।

अंग स्पर्श का अर्थ है जल से अंगो को छूना। इसमें जल से अपनी मानसिक भावना और दृष्टि द्वारा अपने प्रत्येक अंग को प्रभावित। (Hypnotlise) करना पड़ता है।

इस मंत्र में दश आवश्यक अंग गिनाये गए हैं, जिनसे व्यवहार किया जाता है। पहला अंग गिना–वाक् वाक्। अब यहाँ यह प्रश्न उठता है कि न सर से आरम्भ किया जाए, जो सबसे ऊपर है, न पैर से जो सबसे नीचे है और न नाभि से जो बीच में है। वाक् वाक् से ही क्यों आरम्भ किया? यह पहला रहस्य है समझने का! अब मैं तनिक आपसे एक प्रश्न तो कर लूँ। वह यह है कि क्या आपको प्रभु की लीला अद्भुत जान पड़ती है? तनिक सोचिए तो सही। मनुष्य की आँखे ऊपर हैं और कान पहलू में नीचे यह क्यों? अन्य सभी पशुओं के कान हिलते हैं किन्तु मनुष्य के नहीं हिलते।

इन आश्चर्यजनक बातों को हल करने के लिए ही तो हम इस संसार में आए हैं और जब इन बातों के हल निकल गए तो समझो हम मुक्त हो गए, समझदार और बुद्धिमान बन गए, नहीं तो सदैव हैरान, चकित और बेसुध से होकर जन्म–जन्मान्तर में फँसे रहेंगे।

इस भ्रम को दूर करने के लिए आवश्यकता है–ध्यानयोग की। यह सन्ध्या भी तो ध्यानयोग ही है। यदि आप संसार की छोटी–छोटी बातों पर ध्यान दें तो आपको वास्तव में बड़ा आनन्द आएगा।

प्रभु के सभी कार्य बुद्धिपूर्वक हैं–अर्थात् अत्यन्त शुद्ध ज्ञान एवं पूर्ण सिद्धिवाले ईश्वर ने वेदमन्त्रों की रचना की है। संसार में कोई भी पदार्थ बेकार नहीं बनाया है, किन्तु नियम यह है कि जो वस्तु बुद्धि से बनाई गई है उसे बुद्धि से जाना भी जाएगा। जब इन इन्द्रियों का नियमपूर्वक संयम किया जाएगा तो संसार के सारे रहस्य स्वयंमेव खुल जाएँगे।

अब सुनिए! वाक् से यह सिलसिला क्यों आरम्भ हुआ और करतल कर पृष्ठ पर क्यों अन्त हुआ? देखिए, यह वाक्, प्राण, चक्षु श्रोत्र, नाभि, हृदय, कंठ और सिर से चक्कर लगाता हुआ बाहु तथा कर पर समाप्त होता है, परन्तु क्यों?

वाक् और हाथ प्रमुख इन्द्रियाँ हैं। वाक् की पुष्टि हाथ करता है। जिह्वा कहे, वैसा काम न किया जाए तो वह झूठ कहलाता है। कभी–कभी कोई किसी से कुछ प्रण करता है किन्तु कुछ समय बाद जब उसे बताया जाए तो वह कहता है कि–मैंने तो प्रण किया ही नहीं, न ही कहा है। मुझे तो याद ही नहीं पड़ता। किन्तु जब उसे उसके हाथ का लिखा हुआ दिखा दिया जाए तो उसे अपना प्रण ठीक–ठीक स्मरण आ जाता है। यदि किसी को जिह्वा से कहो चुप रहो और वह चुप न होवे तो उसके मुँह पर हाथ रखकर उसे चुप कराया जा सकता है। यदि किसी से कहो इधर आओ और वह न आवे तो उसे हाथ से पकड़कर आज्ञा का पालन कराया जा सकता है।

मनुष्य जब तक सारे शुद्ध और पुण्य कार्य करता रहे, किन्तु सत्यवादी न हो, वह तब तक परमात्मा और आत्म का साक्षात नहीं कर सकता। सच्चाई ही सबसे बड़ी भलाई है। संसार में भले तो बहुत हैं किन्तु सत्यवादी कम हैं। इसलिए वाक् को प्रमुख इन्द्रिय मानकर इससे मन्त्र का आरम्भ किया गया है।

संसार में जितने भी व्यवहार चलते हैं, उनका अधिक सम्बन्ध वाणी से है।

मनुष्य के श्रेष्ठ या दुष्ट होने की पहचान वाणी से ही होती है। गुण–अवगुण का पता भी वाणी से ही चलता है।

मनुष्य अपने मनुष्यत्व या किसी और पर कलंक लगाता है तो वाणी या हाथ से ही लगाता है। इसलिए इन्हें क्रम प्रधान इन्द्रिय मानकर इन्हें पहले रखा गया है।

यही दोनों इन्द्रियाँ बड़ी दानी भी हैं। यही शासक और शक्तिशाली भी हैं। दंड देने वाली भी यही हैं और दंड भी इन्हीं को बड़ा मिलता है। इन्हीं की ही प्रधानता से मनुष्य प्रधान माना जाता है। पशु में न तो वाक् (वाणी) है, और न ही हाथ। मनुष्य दव्य का दान हाथ से करता है और ज्ञान का दान वाणी से। इसलिए शास्त्रकारों ने इन मुख्य और मौलिक चीजों को पहले रखा है। जो मनुष्य की आत्मिक उन्नति का साधन है।

एक बार की बात है, ऋषि दयानन्द जी महाराज जेहलम में उपदेश देने गए थे। वहाँ एक तहसीलदार थी था–पं. अमींचन्द मेहता वह रिश्वत खाने वाला, शराबी और व्याभिचारी था, किन्तु रागी था। एक बार कोई सज्जन उन्हें महाराज के सत्संग में ले गया। उपदेश खत्म होने के बाद किसी ने कहा, 'महाराज' यह तहसीलदार साहब बड़े रागी हैं और कवि भी हैं।' महाराज बोले कुछ सुनाओ! तहसीलदार साहब ने गाया। महाराज अति गदगद हो उठे और बोले, 'अमींचन्द! तुम हो तो हीरा किन्तु कीचड़ में पड़े हो। बस, यही शब्द थे जिन्होंने अमींचन्द की काया पलट कर दी। उन्होंने तुरन्त सारे दुर्व्यसन त्याग दिए। मन और मस्तिष्क में एक ही रट लगी रहती। जब भी कोई कुवासना मन में आती तो तुरन्त महाराज के शब्द आकर रक्षा करते। मन कह उठता, 'अमींचन्द! तुम हो तो हीरा किन्तु कीचड़ में पड़े हो।' यह घटना प्रसिद्ध हुई। सरकारी अफसरों ने आज्ञा भेजी–आपको अफसर माल बनाया जाता है। इन्हें तरंग आई, त्यागपत्र भेजा–

नहीं प्यारी तहसीलदारी, नहीं जंची दरगार।

यदि रखो अपनी सेवा में , किंकर चौकीदार।

हूँ गवर्नर तब क्या बनेगा, जाऊँगा अन्त सिंधार।

अमींचन्द जैसे नीच को तारो!

हे पिता, पतित उद्धारणहार!

अब यूँ न समझिए कि यह अंगस्पर्श मन्त्र साधन है साध्य का। साधन के बिना सिद्धि सम्भव नहीं होती। अंतःकरण की पवित्रता होती है कर्म से, कर्म किया जाता है शरीर से, शरीर संगठन है कर्मेन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियों का, बल बढ़ेगा तब जब इन्द्रियों का दमन करेगा, संयमी बनेगा। यश बढ़ेगा तब जब दूसरों की सेवा करेगा। सेवा करने के लिए धन–सम्पत्ति चाहिए। धन–सम्पत्ति का साधन है व्यवहार। यह व्यवहार इन्द्रियों के सिवा और कौन कर सकता है? अतः हमें इन इन्द्रियों से सर्दैव शुभ कर्म करके ही यश एवं बल प्राप्त करना चाहिए।

छात्रा, कक्षा दसवीं
डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल
कैलाश हिल्स, नई दिल्ली – 65

☞ *पृष्ठ 07 का शेष*

कहो वेद 'हाँ'...

की ओर लौटने का सन्देश दिया। "यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः" (यजु. 36.2) वेदवाणी सुनाकर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, अपने भृत्य व स्त्री आदि अति शूद्र अन्त्यज तक को कल्याणी वेद वाणी पढ़ने व सुनने का अधिकार प्रदान कर दिया। उन्होंने मनु के नाम पर जाति–पाति के भेदभाव का पक्ष लेने वालों को ललकारते हुए इसे अवांधित प्रक्षिप्त सिद्ध करके उनके वास्तविक उद्घोष "शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम्" (मनु. 10.65) अर्थात् जो शूद्रकुल में उत्पन्न होके ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के सदृश्य गुणवाला हो तो वह शूद्र ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य हो जाये। ब्राह्मण क्षत्रिय–वैश्य कुल में उत्पन्न हुआ शूद्र के सदृश्य हो तो शूद्र हो जाये। उत्तम स्त्री, नाना प्रकार के रत्न, विद्या, सत्य, पवित्रता श्रेष्ठ भाषण और नाना प्रकार की कारीगरी सब मनुष्य और सब देश से ग्रहण करें। *सत्यार्थ प्रकाश* चतुर्थ समुल्लास में मनु के इस निर्देश के होते हुए महाराज मनु पर नारी को वेदाधिकार से वंचित करने का आरोप नहीं लगाया जा सकता है।

स्वामी दयानन्द के द्वारा महाराज मनु के अनुमोदन का सकारात्मक प्रतिफल मिलने लगा। भारत माता की प्रिय सन्तानों का अपने मूलधर्म में परावर्तन का द्वार खुल गया। यद्यपि विधर्मी भीषण आत्मघाती आतंकवाद व अत्याचार करके सम्पूर्ण विश्व में घनघोर चीत्कार व अशान्ति की विकराल वायु बहाने में लगे हैं। इतने पर भी शान्ति की प्रकाश रेखा कहीं न कहीं अपनी चमक दिखा जाती है जिससे वेद धर्म की जय जयकार हो जाती है। याद आ रहा है वह ब्राह्मण जो दिल्ली में प्रचार करता था– हिन्दू धर्म व इस्लाम धर्म दोनों ही मत अच्छे हैं। बादशाह बहलोल लोदी ने उसे बुलवाया और कहा–हिन्दू मुसलमान दोनों मत बराबर क्यों कहते हैं। तुम मुसलमान बन जाओ नहीं तो मरने को तैयार हो जाओ। मना करने पर उसे महल के सामने ही जीवित अग्नि में भस्म कर दिया गया। दयानन्द व उनके अनेकशः मानस पुत्रों को श्रद्धाञ्जलि दो, जो उनके शास्त्रार्थ व वेदभाष्य ने भारत में एक नव विहान का उदय कर दिया है और अलीगढ़ में ही इस्लाम वंश–वृक्ष के सुमन "सत्य प्रचार केन्द्र" संचालित करके प्रकाशित करते हैं–पुस्तक "वेद और कुरान–एकता की ज्योति की ओर" जिसमें इसके लेखक तारिक मुर्तजा ने कतिपय वेद मन्त्रों के साथ कुरान की आयतों की समतुल्य भावभूमि का निदर्शन कराया है। कुरान हो क्या कोई भी साम्प्रदायिक ग्रन्थ यदि नकारात्मक विचारों की छँटनी व सकारात्मक विचारों की मंगनी के साथ प्रस्तुत किया जाता है तो दुर्भावना घटती है और सद्भावना बढ़ती है। यही तो वेद के लिये 'हां' है स्वीकृति है। वेद के साथ 'हां' जुड़ती है तो वेदना का 'ना' हटता है। मिटती है वेदना, मिलती है सान्त्वना। दयानन्द की वाणी में मुखर हो उठती है ईश्वरीय वाणी– "वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना सब आर्यों का परमधर्म है।"

'वरेण्यम्' अवन्तिका, (ए.डी.ए.)
रामघाट मार्ग, अलीगढ़ 202001

हमारा मित्र

● अभिमन्यु कुमार खुल्लर

इस संसार में आने के पश्चात् हम बचपन से ही मित्र बनाने लगते हैं सांसारिक प्रवाह में अनेक मित्र जुड़ते हैं और अनेक मित्र पीछे छूट जाते हैं। जो पीछे छूट जाते है, न हम उन्हें याद करते हैं और न ही वे। हमें बुरा भी नहीं लगता। शायद इसे ही संसार की रीत कहते हैं। यह समझने का मौका आयु के अंतिम पड़ाव में ही मिलता है, उससे पहले नहीं। मैं एक ऐसा मित्र जानता हूँ जो होता तो जन्म के साथ है, पर जब आप उसे मित्र मानकर चलना प्रारम्भ कर देते है तो वह आपका साथ कभी नहीं छोड़ता।

ईश्वर के साथ व्यक्ति ने अनेक संबंध बनाये हैं–माता–पिता, गुरु, दाता और न जाने क्या–क्या। ये सब संबंध ईश्वर को उच्चासन पर और भक्त को नीचे आसन पर बिठा देते हैं। मुझे ये संबंध जोड़ने में उतना आनन्द नहीं आया जितना मित्र का संबंध जोड़ने से आया। 'मैत्री' शब्द में अपनत्व की प्रगाढ़ता, विश्वास, खुलापन, और बराबर की हिस्सेदारी अन्तर्भूत है। सामान्यतया यही कहते हैं कि संकट में, विपत्ति में जो काम आए वहीं 'मित्र' कहलाता है। यह पैमाना ठीक है, पर छोटा है। मित्र की यह परिभाषा जब दृष्टिगोचर हुई तो मैं उछल पड़ा–सच्चा मित्र वही है जो आपके अत्यन्त गुप्त भेद को, किसी भी संकट में पड़ने पर प्रकट नहीं करता।

मेरी यह बात वही समझ सकता है, जिसको यह बात अनुभव करने का मौका मिला हो। मौका, मिलता तो अनेक को है पर मित्रता की कलई उतारने का यह स्वर्ण अवसर बन जाता है। दूसरे को चाहे वह निकट संबंधी हो या घनिष्ठ मित्र नीचा दिखा कर भी वह, सुख उठाता ही है। पर, यदि ऐसा मौका मिले और आप परपीड़ा जनित सुख का लोभ संवरण कर पाएं, जो आप अनचाहे उच्चासन पर विराजमान हो जाते हैं और सर्वाधिक विश्वसनीय बन जाते हैं।

मैं व्यक्तिगत जीवन से यथार्थ उदाहरण प्रस्तुत करना चाहूँगा। नाम–पते का उल्लेख नहीं कर सकूँगा।। छदम् नाम–पता भी नहीं लिखूँगा। कार्यालय के वरिष्ठ अधिकारी ने जिनसे मेरा कोई घनिष्ट संबंध नहीं नहीं था और परिचय भी कुछ पुराना नहीं था; मुझसे पूछा कि कार्यालय के पश्चात् मैं उनके घर आ सकता हूँ। कारण पूछने पर कहा कि घर पर ही बताऊँगा। पता पूछ कर घर पहुँच गया। घर पर कहा – पास वाले मकान में चलो। वहाँ जो उन्होने कथा सुनाई तो मुझे इस बात पर आश्चर्य हुआ कि एक अनजान व्यक्ति पर उन्होंने इतना भरोसा कैसे किया और उन्हें कैसे विश्वास हुआ कि मैं उनकी सहायता करूँगा। पैतृक जीन्स में निडरता मिली है, शरीर भी काफी हृष्ट–पुष्ट था। मैंने स्वीकृति दे दी। किस्सा यह था कि उनकी नवयौवना पुत्री, एम.ए. की छात्रा, एक मात्र संतान एक आवारा गुण्डे के चंगुल में फंस गई थी। जाने किन परिस्थितियों में उसके घर में आना–जाना हो गया था। दिन ब दिन उस लड़के का शिंकजा कसता जा रहा था। जब पानी सिर से ऊपर हो गया तो उनके लिये जीवन–मरण का प्रश्न बन गया। कॉलोनी में वह और उसके यार –दोस्त चक्कर लगाते ही रहते थे। लड़की को भी निकालना और परिवार को भी। मैंने उनसे कहा लड़की को बुलाइ, मैं उसे अपने घर ले जाता हूँ। आप सपरिवार सुविधा अनुसार आ जाइए। एक घण्टे में वे लोग अपने घर पर आ गए। सुबह 2 बजे पठानकोट एक्सप्रेस से वह लड़की को लेकर रिश्तेदारी में जाना चाहते थे। उनका घर स्टेशन के पास ही था इसलिए गुण्डों द्वारा घिर जाने की आशंका के कारण मुझे भी साथ ले गए। लड़की की व्यवस्था कर तीन चार दिन बाद ही ग्वालियर लौट आए। आते ही कहा–एक काम और करो। अभी ग्वालियर में हमारा रहना नहीं हो पाएगा, कहीं रेसीडेन्ट ऑफिस में पोस्टिंग कराओ। यह काम बड़ा था। फिर भी मैंने हिम्मत की, संबंधित अधिकारी को जब बताया कि महाशय मय अपने माता –पिता के मेरे घर पर टिके हुए हैं।

अधिकारी महोदय ने मेरी बात की सत्यता पर पूर्ण विश्वास कर ग्वालियर के बाहर तीन साल के लिये उनकी पदस्थापना तत्काल कर दी। प्रकरण हम दोनों के बीच ही रहा। अब तो मुझे भी सेवानिवृत्त हुए 17 वर्ष हो गये हैं। वह कहाँ हैं मुझे ज्ञान नहीं। मुझे आज भी प्रकरण यादकर संतोष मिलता है, सुख मिलता है कि उनके परिवार की मर्यादा पर आँच नहीं आई। कुछ घटनाओं का वर्णन कर सकता हूँ। पर इसलिये नहीं कर पाऊँगा कि पात्र जीवित हैं और आस–पास घूम रहे हैं।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि ऐसे कर्म ईश्वर जोड़ के खाते में अवश्य रख लेता होगा। इस जीवन में ऐसे प्रसंगों से आपका आत्मबल बढ़ता है। ईश्वर पर विश्वास गहराता जाता है, क्योंकि ईश्वर स्वयं करोड़ों लोगों के अत्यन्त गोपन रहस्यों को प्रकटतया उजागर नहीं करता। एक तो यह मानवीय कार्य व्यापार है दूसरे आग लगाकर मज़ा लूटना भी उसका गुण–धर्म नहीं है।

ईश्वर की मित्रता में दूसरा गुण उसकी सहायता करने की अपार सामर्थ्य है। वह जैसी सहायता करता है, उसे देखकर हम अनायास ही कह उठते हैं, यह दैवी सहायता है, प्रभु की कृपा है। वेद मर्मज्ञ पं. शिवनारायण उपाध्याय जी (कोटा) ने मुझे एक व्यक्तिगत पत्र में लिखा था कि देवी सहायता की अनुभूति उन्हें जीवन में अनेक बार हुई है और यही अनुभूति ईश्वर के अस्तित्व का प्रमाण है। मेरा व्यक्तिगत अनुभव भी यही कह रहा है। अपने जीवन के कतिपय प्रसंगों को लेखनीबद्ध करता हूँ–

> **ईश्वर की मित्रता में दूसरा गुण उसकी सहायता करने की अपार सामर्थ्य है। वह जैसी सहायता करता है, उसे देखकर हम अनायास ही कह उठते हैं, यह दैवी सहायता है, प्रभु की कृपा है। वेद मर्मज्ञ पं. शिवनारायण उपाध्याय जी (कोटा) ने मुझे एक व्यक्तिगत पत्र में लिखा था कि देवी सहायता की अनुभूति उन्हें जीवन में अनेक बार हुई है और यही अनुभूति ईश्वर के अस्तित्व का प्रमाण है। मेरा व्यक्तिगत अनुभव भी यही कह रहा है। अपने जीवन के कतिपय प्रसंगों को लेखनीबद्ध करता हूँ–**

(1)पत्नि श्रीमती स्वदेश दोनों छोटे बच्चों, मनीषा व अमित को लेकर पठानकोट बस स्टेन्ड पर खड़ी थीं। बस आ गई थी और धक्का मुक्की में लोग अपना समान बस पर चढ़ा रहे थे। मैं भी भरी हुई बड़ी वी.आई.पी. की अटैची लेकर चढ़ गया। जब अंतिम सीढ़ी पर पहुँचा तो अटैची वाला हाथ हवा में लहरा गया और मैं मय अटैची के नीचे गिरा। मुझे बिलकुल चोट नहीं आई। पहला विचार यही आया कि यदि गलत एंगल से गिरता और दुर्घटनाग्रस्त हो जाता तो पत्नि बच्चों को कैसे संभालती और कैसे मुझे? क्या इसे ईश्वरीय सहायता के अतिरिक्त, कुछ कहा जा सकता है?

(2)भानजे ज्योति के साथ उसकी स्टेन्ड गाड़ी (बहुत छोटी) में ग्वालियर से मण्डी हिमाचल जा रहे थे। गाड़ी अच्छी स्पीड पर दौड़ रही थी, होटल पास में ही था कि ज्योति को स्टीरियों में कैसेट चेन्ज करने के लिए झुकना पड़ा। वह झुका और मुझे पेड़ों की हरियाली दिखाई देने लगी। मैं चीख उठा–ज्योति, ज्योति ने जो स्टीयरिंग काटा तो गाड़ी हाइवे पार कर नीचे झाड़ियों में रेत में घुस गई। पत्नि पिछली सीट पर थी और भैया अभी गर्भ में ही था। किसी को कोई चोट नहीं आई। दुर्घटना का असर आज भी गहरा है।

(3)11 फरवरी 14 को ब्रेन हेमरेज का पहला अटैक हुआ। तीन दिन आई. सी.यू. में रखने के बाद डॉक्टरों का निर्णय हुआ कि रक्त का थक्का घुल गया है और मुझे अस्पताल से छुट्टी दे दी गई। 23 को फिर तबियत बिगड़ने लगी। दोपहर का खाना 4 बजे खाया। घुटने मोड़कर, बाहर की तरफ पैर निकाल कर लेटा रहा।। बजे तक पत्नि श्रीमती स्वदेश ने दो–तीन बार खाना खाने के लिये कहा तो मनाकर दिया। फिर हाँ, हूँ के अलावा कोई बात नहीं और धीरे–धीरे अचेतावस्था में चला गया। रात 2:30 बजे पत्नि समीपस्थ भानजे को बुला लाई। यही निर्णय हुआ कि सुबह अस्पताल ले चलेंगे।

सुबह पूर्ण बेहोशी की स्थिति में परिवार अस्पताल (प्राईवेट) पहुँचाया गया। डॉक्टर को बुलाया गया। डॉक्टरों की राय थी कि ब्रेन हेमरेज फिर हो गया है। आवश्यक जाँचो के पश्चात् ऑपरेशन कराने की सलाह दी गई। पत्नि ने तत्काल कहा कि आप ऑपरेशन की तैयारी कीजिये। आवश्यक धन मैं काउण्टर पर जमा करा रही हूँ। सब तैयारी में शाम सात बज गये। सात बजे प्रारंभ हुआ। ऑपरेशन साढे आठ बजे समाप्त हुआ। दूसरे दिन 24 घण्टे के बाद होश आया। दानों हाथ पलंग से बंधे थे। दस दिन बाद घर आया। एक माह तक घर के बाहर जाने की इजाजत भी नहीं थी। टायलेट जाने जाने के लिये भी पत्नि पीछे चलती थी। डेढ़ माह के बाद मस्तिष्क की धुंध साफ होने लगी। मन में बार–बार यही विचार उठता था कि पत्नि से पूछूँ कि रात 1 बजे से शाम 8 बजे तक, ऑपरेशन प्रारंभ होने तक, तुम्हारी मनः स्थिति क्या रही। पर ताजा घाव कुरदने का मन नहीं हुआ, हिम्मत नहीं हुई, मन का यह संघर्ष चल ही रहा था कि अप्रैल 2014 को वेदमर्मज्ञ पं. शिवनारायण उपाध्याय जी (कोटा) का पत्र मिला। उस पत्र में पण्डित जी ने दुःख प्रकट किया कि जब आपकी पत्नि मर्मान्तक पीड़ा झेल रही थीं तो उन्होंने हमें (पं. जी को) याद क्यों नहीं किया। मुझे अपनी बात करने का मौका मिल गया। मैने पत्र पढ़कर

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

thearyasamaj.org

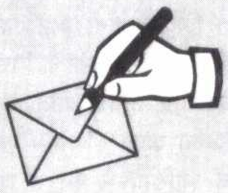

पत्र/कविता

कृष्ण जन्माष्टमी

इस नील गगन में घनश्याम
उतरो न धर नूतन शरीर।
तुम भारत के गौरव गिरीश
तेरी गीता जन सुधा पेय
विष की गगरी में जिसे डाल
कर लिया जगत ने स्वार्थ श्रेय
स्थापित कर तेरी पाषाण–मूर्ति
रच लिया ढोंग वशीकरण तौर

ओ योग–मूर्ति, ओ तप: तेज
ओ देव शकट के सार्थवाह
प्रतिभा के उद्भव शांतिदूत
कंस सुयोधन के अग्निदाह
मानव में बढ़ता मनस्ताप
कर देता मुझको भी अशांत
दैव जीवन का मधु संदेश
थका हुआ चूर प्रस्विन्न कलांत
तब अपने तनु का चढ़ा छत्र
बरसो ना हे घन स्वयं नीर

अकिंचन का धन चूस–चूस
हाँ! भारत माँ का लाल रक्त
तेरे नामों का कर प्रयोग
बन गये स्वयं जो निकट भक्त
उन धनिकों के है जीप कार
इस सूखे तरु के नग्न पैर
बिल्डिंग्ज भवन वे महाकार
अभिनव कुंजों की मधुर सैर
खा–खा मनचाहा फुला तोंद
ठाले माजीरी पीन पेट

तिलक माला का कर प्रपंच
ठगते अनुदिन धर नाम सेठ
पिस रही कहीं है नवल स्फूर्ति
झड़ रहा कहीं यौवन वसन्त
मानवता की उड़ रही धूल
धूमायित जिससे दिग्दिगन्त

पहना तुझको हिंजड़ा लिबास
मंदिर के आंगन में नृशंस!
दृग रास रचा वासना–कीट
मातृ शक्ति का कर रहे ध्वंस।।
है मनुज लुटेरा हिंस्र चोर
क्या राजा क्या धनहीन रंक।
छलने को आकुल सकल लोक
हा! शूल भरा जग का पल्यंक।।

मूढों ने रच अवतारवाद
कर नूतन विधि का आविष्कार।
भारत को लिस्तल में धकेल
दासत्वानल में किया क्षार।।
जग का कण कण विश्वास–शून्य
वैयक्तिकता का पृथक् पुंज।
कुत्तों सा अपलक घूर–घूर
छीन झपट रचता निज निकुंज।।
वैद शिकजा में लुप्त प्राय

तुझ–से ऋषियों का वेद–ज्ञान।
मुरुस्थल में जो सरस स्रोत
मुकुलित करता था मरुद्यान।।
संस्कति के ये भग्नावशेष
तेरे चेलों से भ्रष्ट हन्त!

ये वंचक उन पर सजदुकान
कहलाते गोस्वामी महन्त।।

वेदों का पुष्कल ज्ञान त्याग
रच लिये अनेकों सम्प्रदाय।
दुष्टों ने दी सिन्दूर पोंछ
बहनों की कुंकुम भरी मांग।
कायर थे लुटती लाज देख
जननेता पन का धरे स्वांग।।
वह देखो ये उत्तुंग शैल
धरा हृदय पर विष–सिक्त स्फोट।।

बर–बस जड़ से इनको उखाड़
कर द्रुत घन घनन घूम चोट

श्रमिकों का गौरव साधिकार
अपने में ही हो ले न लीन।

झुक झुक पल्लव ले धरा चूम
स्खलित अकेली तड़फे न मीन।।
कर्म करें जन वेदानुकूल
तुम बन आओ फिर दयानन्द।
झड़ें जगत् के झंखाड़ झाड़
थिरके जन मन पर नवल स्पन्द।।
क्षितिज अधर विकसे बाल सूर्य
धवल शुभ मृदु मधु स्मय गंभीर
इस नील गगन में घनश्याम उतरो
ना धर नूतन शरीर..

डॉ मदन मोहन
जावलिया–252वंयानगर
गुर्जर की थड़ी सांगानेर रोड जयपुर
राजस्थान – 302095

विचारों के साथ ही जीने मरने की शपथ लेनी होगी

देश में अच्छे दिन आने के संकेत आ रहे थे पर अब तो यह प्रतीत होता है कि ये दिन आ गए है। पहले हम सामान्य तौर पर इनके देश के क्षितिज पर आने की चर्चा करेगें और बाद में आर्य समाज में आने के बारे में भी।

गत दिवसों की गतिविधियों का एक विहंगावलोकन करने पर हम पाते हैं कि देश में कैसा वातावरण था। केवल इंगित रूप में कुछ बातों की ओर ध्यान आकर्षित किया जाता है। विविध क्षेत्रों में भ्रष्टाचार, यथास्थिति बनाए रखने की प्रवृत्ति, स्वदेश, स्वभाषा, स्वसंस्कृति आदि के प्रति निरस्कार, अल्प संख्यकों की किसी भी निम्न स्तर तक जाकर तृष्अिकरण की योजनाओं का सूत्रपात, जाति, वर्ग व वर्ग के आधार पर विभाजन–जिससे वोट बैंक बना रहे प्रयास अनवरत रूप से चलते रहे भले ही देश की ऐक सूत्रता की कितनी भी हानि क्यों न हो जाए, देश की सीमाओं पर हो रही नाकाप व लोमहर्षक गतिविधियों को न केवल नजर अन्दाज करना अपितु प्रतिकार करने का हौसला भी प्रदर्शित न करना आदि बाते थीं जिनसे देश के सर्व साधारण व्यक्ति को भी झकझोर दिया। देश कब तक ऐसी स्थिति को सहन कर सकता था? लोगों के धैर्य रखने की भी सीमा होती है। यह, धैर्य टूटा और अनुकूल वातावरण बनने पर कल्पनातीत रूप से कायापलट हुई जो कि ऐतिहासिक रही न केवल भा.ज.पार्टी को असाधारण बहुमत मिला अपितु कइयों के तम्बू उखड़ गए और कई तो कहीं के भी न रहे।

देश अब निश्चिन्तता के वातावरण में भविष्य की योजनाओं के बनाने का व क्रियान्वयन कर सकता है। अनेक ज्वलन्त समस्याएं हैं जिनको सुलझाना आवश्यक है। जैसे – जैसे समस्याएं सुलझेंगी वैसे–वैसे अच्छे दिनों का मार्ग प्रशस्त होगा। परिवर्तन का जो मार्ग बना वह सहसा नहीं बना है। इसी संदर्भ में उपेक्षित राष्ट्रभाषा हिन्दी को उसका यथेष्ट स्थान दिलाने की श्रीमान् मोदी जी की पहल निसन्देह सराहनीय है। इस एक कदम से जहां हिन्दी का बोलवाला होगा वहां भारतीय भाषाओं के दिन भी सुधरेंगे।

आर्यसमाज में भी अच्छे दिनों ने दस्तक दी है। उनके अनुसार स्वामी सुमेधानन्द जी, जनरल वी.के.सिंह, डॉ. हर्षवर्धन, डॉ. सत्यपाल सिंह, श्री अश्विनी चौपड़ा, श्री प्रवेश वर्मा, श्रीमति मीनाक्षी लेखी, श्री रमेश विधूड़ी और डॉ. सुनील गायकवाड़ लोक सभा में पहुंच चुके हैं। ये प्राय: आर्य विचारधारा के या आर्य पृष्ट भूमि के महानुभाव हैं । आर्य समाज के लिए यह निर्विवाद रूप से गर्व के क्षण हैं। हो सकता है कि यह सूची और लम्बी हो सकती है। एक अनुमान के अनुसार इतनी बड़ी संख्या में आर्यों की लोकसभा में उपस्थित पहली बार ही हुई हो।

आर्य समाज नैतिकता तथा सात्विकता का पर्याप्त माना जाता रहा है। आज दो प्रमुख समस्याएं समाज के सामने हैं। पहली है युवतियों और विशेष फर अवयस्क कन्याओं का देहशोषण तथा उनकी हत्या। कानून तो अपना कार्य करता है पर उसके प्रयास एवं परिणामों से सन्तोष होने का प्रश्न ही नहीं रह गया है। सामाजिक जागृति व भागीदारी से दशा में यथेष्ट सुधार की आशा की जा सकती है। आर्यसमाज को इस तथा दूसरी समस्या–भ्रष्टाचार से मुकाबला करने की चुनौती है। इससे देश के संकट का पटाक्षेप होगा तथा कहा जा सकेगा और **''स्वैरिणी कुत:''**।

आर्य समाज के और अच्छे दिन लाने हेतु सर्वसाधारण आर्यो, नेताओं, विद्वानों शिक्षण संस्थाओं में कार्य करने वाले महानुभावों आदि सभी को जागरूक होना होगा। केवल इंगित रूप से कुछ कहना चाहूंगा। आर्य समाज के सक्रिय हाने तथा प्रचार प्रसार से कई दुकानों के बन्द की सभावना रह जाती है। अत: आपसी मत भेदों को हमें भुलाना होगा। इससे आर्य समाज को अपूरणीय क्षति हुई है। जब जगे तभी सबेरा। समय की मांग है हमें उठ खड़े होना पड़ेगा। जीवन अपर्ण करना होगा। डॉ. धर्मवीर जी के शब्दों में कहा जाए तो ''जीवन अपर्ण करने से ही जीवन का अवसर मिलता है। विचारों के साथ ही जीने मरने की शपथ तो हमें ही लेनी होगी''।

जयसिंह गायकवाड़
280, गुप्तेश्वर वार्ड
कृपाल चौक मदन महल
जबलपुर म.प्र.

☞ पृष्ठ 09 का शेष

हमारा मित्र

सुना दिया और पूछा कि जानना चाहता हूँ कि तुम्हारी मानसिक स्थिति कैसी थी? 20 घण्टे से निश्चेत–अवस्था में पड़ा हुआ देखकर क्या विचार आ जा रहे थे। पत्नि ने बिना विलम्ब किये तत्काल कहा कि मुझे ईश्वर का पूरा भरोसा था कि आप बिलकुल ठीक हो जायेंगे। दूसरे मुझे डॉ. उदेनिया, न्यूरोफिजिशियन जो मेरे कार्यालय सहयोगी के सुपुत्र हैं, उन पर भी पूरा भरोसा था कि इलाज में वह कोई कसर नहीं छोड़ेगें। दोनों भरोसे में खरे निकले और आप ठीक है।

सवाल यह उठता है कि श्रीमती जी की वैदिक ईश्वर में इतनी प्रबल, दृढ़ आस्था न होती तो वह टोने–टोटके, गंडे–ताबीज, साधु–फकीर, मन्नतें, पचास चक्करों में पड़कर, रो–रोकर बुरा हाल कर देती। ऑपरेशन सायं 7:00 बजे प्रारंभ हुआ। सबकी वाणी मौन हो गई। पत्नि ने इसे सुअवसर समझ कर संध्या कर ली। परिवार व बाहर के सभी परिचित लोग उसके धैर्य, मस्तिष्क पर पूर्ण नियंत्रण रख कर, सभी आवश्यक काम व व्यवस्था का संचालन स्वयं करते हुए देख कर आश्चर्यचकित थे। आज भी हैं। मैं अपनी बात नहीं करता पर श्रीमती की बात सुन कर, समझ कर आश्चर्य चकित होता हूँ। स्वयं से ही पूछता हूँ कि क्या मैं ऐसा कर पाता? ईश्वर के प्रति एकान्त निष्ठा व कर्त्तव्य के प्रति जागरुकता ईश्वर कृपा का ही फल है, ऐसा मानना है और यही पत्नि श्रीमती स्वदेश ने करके दिखलाया। कर्त्तव्य–कर्म, पूर्ण विचार के बाद स्थिर करना यदि ईश्वर में आस्था का परिणाम नहीं है तो और क्या है?

अन्य घटनाओं से लेख का कलेवर नहीं बढ़ाना चाहता। महर्षि मानते हैं कि ईश्वर सहायता करता है पर कब? जब पूर्ण पुरुषार्थ करने पर भी किसी कठिन समस्या का निराकरण न हो रहा हो, तभी प्रार्थना करने पर वह अवश्यमेव सहायता करता है। कोई हल सुझाता है। किसी मित्र., सगे–संबंधित को भेज देता है। कोई न कोई ऐसा बाना बना देता है, जिससे आपका काम बन जाए और काम न होने वाला हो तो संतोष प्रदान करता है। बस जरुरत धैर्य की और विश्वास की। उस पर विश्वास की कमी ही हमें इधर–उधर भटकाती है। और यही कमजोरी अमरनाथ तिरूपति बालाजी, सोमनाथ जी व वैष्णोंदेवी व शिरडी आदि अन्य अनेक तीर्थों पर भटकन का कारण है। मैं इसे आस्था की पूर्ति हेतु यात्रा नहीं मान सकूँगा क्योंकि आस्था भटकाती नहीं, आश्रय देती है।

से.नि. वरिष्ठ लेखाधिकारी (केन्द्र)
22, नगरनिगम क्वार्टर्स, जीवाजीगंज
लश्कर ग्वालियर 474001 (म.प्र.)

☞ पृष्ठ 06 का शेष

नामकरण संस्कार का...

कौशल्या के पुत्र का रखा दशरथ नाम।
'काका' कोई–कोई रिश्ता बड़ा निकम्मा।
पार्वती देवी है शिवशंकर की अम्मा।।

यदि माँ का नाम 'कौशल्या' है तो पुत्र का नाम 'दशरथ' न रखें।दशरथ–कौशल्या पति–पत्नी थे, पर यहाँ माँ–बेटे बन गए। इसी प्रकार माँ का नाम 'पार्वती' है तो पुत्र का नामकरण 'शिवशंकर' करना कहाँ की बुद्धिमत्ता है? 'कमलाशंकर' या 'रमाशंकर' नामकरण में भी कोई औचित्य नहीं। क्योंकि कमला, रमा (लक्ष्मी) विष्णु की पत्नी का नाम है और 'शंकर' शिव का। अतः कमलाशंकर, रमाशंकर इन दोनों नामों के योग में कोई साम्य नहीं।

3. कई बार संयुक्त नाम में एक शब्द तो सार्थक और सुन्दर होता है तो दूसरा सार्थक होते हुए भी भद्दा और हीनता सूचक। यथा–पीयूष पाचक। पीयूष का अर्थ है–अमृत और पाचक का रसोइया या पकाने वाला। भला इन दोनों शब्दों में क्या मेल?

अन्य शब्द है–चन्दनमल या सागरमल। इनमें चन्दन और सागर शब्द तो ठीक हैं परन्तु 'मल'–मैल या मलिनता का सूचक है।

कहते हैं, महर्षि दयानन्द के पास एक व्यक्ति कुछ जिज्ञासा लेकर आया। महर्षि ने उसका नाम पूछा। उस व्यक्ति ने कुछ संकोच के साथ उत्तर दिया– 'महाराज! मुझे कूड़ामल कहते हैं।' महर्षि ने भी मनोरंजक उपहास करते हुए कहा– 'क्यों भाई, कूड़े में कुछ कमी थी जो उस पर मल रख दिया?'

कितनी करारी चोट की है महर्षि ने कुत्सित नामार्थ पर? अतः हमें ऐसे कुत्सितार्थक नामों से बचना चाहिए। नामकरण से पूर्व शब्दों के अर्थ अवश्य विचार लेना चाहिए।

कारण? देखिए– बच्चे का नामकरण किया–तनुज। तनुज का अर्थ पुत्र है। क्या तनुज सभी के लिए पुत्र है? नहीं, न? सम्बन्धों के आधार पर भाई, चाचा, ताया, मामा कुछ भी हो सकता है। क्या पत्नी भी उसे तनुज (पुत्र) समझेगी? माता–पिता के लिए तनुज–पुत्र है, शेष के लिए नहीं। 'तनुजा'–बेटी शब्द की भी यही स्थिति है।

'अनुज' का अर्थ छोटा भाई है। अनुज भी तो सभी के लिए छोटा नहीं होगा न? अपने से छोटे भाई के लिए तो अग्रज ही रहेगा। पत्नी भी उसे अनुज–छोटा भाई नहीं समझेगी। अनुजा–छोटी बहन शब्द का भी ध्यान रखें।

4. जन्म स्थान, किसी मन्नत–स्थान के आधार पर अथवा बिना विचारे ही किसी स्थान के नाम पर किया जाने वाला नामकरण–मथुरादास, काशीराम, अयोध्याप्रसाद, ब्रज बिहारी, मैथिलीशरण, पिंडीदास, लाहौरीराम, पिशोरीलाल, अजमेर सिंह, कश्मीरीलाल आदि नामकरण में कोई औचित्य नहीं है।

5. जन्म दिन के आधार पर–मंगल को जन्मा मंगलसिंह, मंगलू, मंगलदेव, हनुमान्, बुध को जन्मा बुधराम, बुधसिंह आदि यह भी अन्धविश्वास पर आधारित हैं।

6. कई बार अभिभावक इसलिए भी बच्चे का भद्दा, निरर्थक नाम रख लेते हैं कि कहीं बच्चे को नजर न लगे, कुछ अशुभ न घटित हो। यथा– मंगनीराम, मर जाणा, मर दा ना = मरदाना, गौरवर्ण को काला कहना आदि। यह भी अज्ञानता और अन्धविश्वास ही समझना चाहिए। इस धारणा में कोई तथ्यपूर्ण औचित्य नहीं। क्योंकि शुभ–अशुभ घटित होने में नाम का कोई आधार या कारण नहीं होता। अतः अच्छे, सार्थक नाम ही रखें।

7. कई बार प्रगतिशीलता, नवीनता या दूसरों से भिन्नता प्रकट करने के लिए कुछ अजीब सा रिवाज चल पड़ता है। जैसे–आजकल नामकरण करने लगे हैं– शिवम्, सत्यम्, शुभम्, मंगलम्। वस्तुतः यह शब्द संस्कृत के हैं और नपुंसक लिंग में हैं। जबकि बच्चा पुरुष (पुल्लिंग) है। फिर पुरुष (पुल्लिंग) को नपुंसक क्यों बनाया जा रहा है, समझ में नहीं आता। बस, यही कहा जा सकता है कि यह सब अज्ञानवश और बिना सोचे समझे हो रहा है। शिक्षित जन भी उतनी ही त्रुटि कर रहे हैं जितनी कि अशिक्षितजन। इस ओर किसी का ध्यान जाता ही नहीं। पुरोहित–पण्डितवर्ग भी इस पर विचार नहीं करता। आर्यों में भी ऐसे नामों का प्रचलन होता जा रहा है।

वैसे इन नपुंसकलिंग नामों का सुधारकर शिवकान्त, शिवेन्द्र, शिवेन्दु सदृश नाम रखे जा सकते हैं।

एक नाम और पढ़ने को मिला–सोहम्। यह शब्द सः+अहम्=सोऽहम्=सोहम् सन्धियुक्त शब्द है। इसका अर्थ है–वह मैं। सम्भवतः नामकरण करने वाले सज्जन ने इसके अर्थ पर विचार नहीं किया। ऐसा प्रतीत होता है कि वेदान्ती गुरुजी के उपदेश से प्रभावित होकर यह नाम रखा गया है। वरना इसमें कोई औचित्य नहीं।

8. गुरुओं द्वारा नामकरण– कई श्रद्धालु अपने गुरूओं से नाम पूछ लेते हैं। बस, जैसा उन्होंने बताया वैसा रख लिया। सोचने, समझने, विचारने का प्रश्न ही नहीं। एक सज्जन ने बेटी का नाम 'अनुराधा' रखा। मैंने कहा–'इससे और सुन्दर नाम है, उनमें से रखें।' उत्तर मिला– 'न, न! यह गुरुजी का दिया हुआ नाम है।' देखा आपने! यह भी अन्धविश्वास नहीं तो और क्या है?

9. नाम में वर्णों की संख्या– महर्षि दयानन्द ने 'संस्कार विधि' में लिखा है कि पुत्र हो तो दो, चार, छः और पुत्री हो तो एक, तीन, पाँच अक्षरों वाला नाम रखें। वैसे उन्होंने इसका कोई कारण या औचित्य नहीं बताया।

मेरे विचार से नाम की सार्थकता, मधुरता एवं सुबोधता की ओर ही अधिक ध्यान देना चाहिए। वर्णों के समाक्षर दो, चार, छः अथवा विषमाक्षर एक, तीन, पाँच का वैज्ञानिक आधार पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। कपिल, कणाद, गौतम आदि महान् दार्शनिक ऋषियों के तीन अक्षरों वाले विषमाक्षर नाम थे तथा सीता, गार्गी, कुन्ती, लोपामुद्रा, मदालसा, मेघा, श्रुतिकीर्ति आदि प्रसिद्ध विदुषियाँ समाक्षर नामों वाली हो चुकी हैं। इन पर सम या विषमाक्षर का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। अतः नामों की सुन्दरता, सुस्पष्टता, सार्थकता आदि पर ही अधिक ध्यान देना चाहिए, न कि वर्णों की संख्या पर। क्योंकि यह नियम उतना व्यावहारिक प्रतीत नहीं होता।

जहां तक पुरुष, स्त्री के भेद होने का प्रश्न है, सो नाम के लिंग से ही स्पष्ट हो जाएगा। जैसे विजय पुल्लिंग और विजया स्त्रीलिंग अथवा विजय कुमार और विजय कुमारी में भी लिंगभेद स्पष्ट है।

फिर भी इस सम्बन्ध में मेरा कोई दुराग्रह नहीं है। यदि कोई सज्जन तर्क के लिए ही तर्क करना चाहे तो अलग बात है। केवल पाण्डित्य–प्रदर्शन में कोई औचित्य नहीं। व्यावहारिकता एवं यथार्थता के समीप होना ही श्रेयस्कर है। इतनी सूक्ष्मता के साथ तो आर्यों में भी नामकरण नहीं किया जा रहा है। तमाम आर्यों के नामों में वही दोष विद्यमान हैं, जिनका ऊपर उल्लेख किया गया है। बड़े–बड़े व्याख्याता, उपदेशक और विद्वान भी इन दोषों से नहीं बच सके हैं। फिर वर्णों की संख्या अथवा स्वर, व्यञ्जनों में से निर्धारित/चयनित अक्षरों पर क्यों अवलम्बित रहा जाय?

4–ई, कैलाश नगर,
फाजिलका, पंजाब,
मो. 09463428299

thearyasamaj.org

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2012-14
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2012-14
POSTED AT N.D.P.S.O. ON 13-14/8/2014
रजिस्ट्रेशन नं. आर0 एन0 आई0 39/57

ओ३म्

D.A.V. PUBLIC SCHOOL

Affiliated to C.B.S.E New Delhi (Affiliation Code-1630459)
(Managed by D.A.V College Managing Committee, New Delhi)
Sarbha Nagar Extn., Pakhowal Road, Vill. Daad, P.O. Lalton Kalan. LUDHIANA(PB)-142022
(An Indian Culture Oriented English Medium School)

We are proud of our Shining Stars

RESULT HIGHLIGHTS OF CLASS XII

Total Number of students appeared :110

No. of students scoring 90% & above	:	25	No. of students scoring 80% – 89.8%	:	34
No. of students scoring 75% – 79.8%	:	12	Total no. of students scoring 75% & above	:	71

Sahibdeep Singh
Commerce – 97.8%

- 3rd in City(Comm. Stream.)
- School Topper.
- Role of Honour by Mrs. Smriti Irani (Hon'ble HRD Minister)
- Awarded by Hon'ble Deputy Commissioner of Ludhiana
- Awarded by Hon'ble President DAVCMC Sh. Punam Suri Ji

CLASS XII High Achievers Blessed by Hon'ble President Sh. Punam Suri Ji

Ashutosh Chugh
Non-Medical – 96.6%

- School Topper Non-Medical.
- Role of Honour by Mrs. Smriti Irani (Hon'ble HRD Minister)
- Awarded by Hon'ble President DAVCMC Sh. Punam Suri Ji
- Pursuing B.Tech Chemical Engg. In IIT Delhi

STREAMWISE TOPPERS

COMMERCE

Sahibdeep Singh-97.8% | Madhav Arora-96% | Ravneet Kaur-95.2%

NON-MEDICAL

Ashutosh Chugh-96.6% | Kunal Taneja-96.4% | Jay Naulakha-94.6%

MEDICAL

Paras Bhatia – 93.4% | Parneet Kaur-92.6% | Jaspreet 92%

STUDENTS SCORING 90% AND ABOVE IN AGGREGATE

Sahibdeep Singh, Madhav Arora, Ravneet Kaur, Shivam Talwar, Shivam Kaura, Anmol, Divyansh, Aayesha, Lovleendeep, Palak Garg, Vineet Wadhwa, Karan, Varun Gandhi

Sagar Gupta, Divyansh Arora, Harsimran, Megha, Saurabh Gupta, Paras Bhatia, Parneet Kaur, Jaspreet Kaur, Ashutosh Chugh, Kunal Taneja, Jay Naulakha, Swapnil

HEARTIEST CONGRATULATIONS TO PARENTS, STUDENTS & TEACHERS

Sh. Punam Suri Ji (Chairman)	Mrs. P. P. Sharma (Regional Director)	Mr. B.B. Sharma (Manager)	Dr. Mohan Lal Sharma (Principal)

मुद्रक व प्रकाशक – श्री प्रबोध महाजन, सभा मंत्री द्वारा मदन गोयल के प्रबंध में अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि., डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित कार्यालय 'आर्य जगत्' आर्यसमाज भवन, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 से प्रकाशित। स्वामित्व – आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 (दूरभाष : 23362110, 23360059) सम्पादक – श्री पूनम सूरी